योगवाणी

वर्ष ४०, मई, २०१५

।।ॐ नमो भगवते गोरक्षनाथाय ।।

योगवाणी

(धर्म-संस्कृति, अध्यात्म एवं योग प्रधान पत्रिका)

संस्थापक-सम्पादक

राष्ट्रसंत ब्रह्मलीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ

प्रधान सम्पादक

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ

प्रबन्ध सम्पादक

प्रदीप कुमार राव

सम्पादक
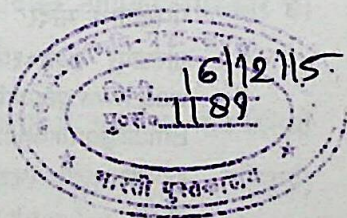
नित्यानन्द श्रीवास्तव

प्रकाशक

श्री गोरखनाथ मंदिर

गोरखपुर २७३०१५

योगवाणी

वर्ष ४०, मई, २०१५

आर.एन.आई.२९०७५/७६

संस्थापक-सम्पादक
राष्ट्रसंत ब्रह्मलीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ
प्रधान-सम्पादक
गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ

प्रबन्ध सम्पादक
प्रदीप कुमार राव
सम्पादक
नित्यानन्द श्रीवास्तव
सहयोग
द्वारिका तिवारी

वार्षिक सदस्यता : १२५/-
द्विवार्षिक ,, : २५०/-
पंचवार्षिक ,, : ६००/-
आजीवन ,, : १२००/-
एक प्रति का मूल्य : १५/-

प्रकाशक
गोरखनाथ मंदिर
गोरखपुर २७३०१५
web:www.gorakhnathmandir.in
Email:gorakhnathmandir@yahoo.com
दूरभाष : (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४
फैक्स : (०५५१)-२२५५४५५

मुद्रक : इउरेका प्रिंटिंग वर्क्स
वी0मार्ट के सामने, मेडिकल रोड, गोरखपुर
मोबाईल : ९३३६४०४८८३, ९८३९०११५२०

भगवान आदिनाथ (परम शिव) की वन्दना
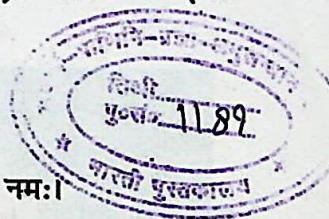
नमस्ते आदिनाथाय विश्वनाथाय ते नमः।
नमस्ते विश्वरूपाय विश्वातीताय ते नमः॥ १॥
उत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणे क्लेशहारिणे।
नमस्ते देवदेवेश! नमस्ते परमात्मने॥ २॥
योगमार्गकृते तुभ्यं महायोगीश्वराय ते।
नमस्ते परिपूर्णाय जगदानन्दहेतवे॥ ३॥

हे आदिनाथ (अलखनिरंजन, स्वस्वरूप परमेश्वर)! समस्त विश्व के पालक–विश्वनाथ! आप को नमस्कार है। हे विश्व में व्यापक विश्वरूप! आपको नमस्कार है। हे विश्वातीत (द्वैताद्वैतविवर्जित) अखण्ड परमात्म स्वरूप निराकार–निर्विकार–स्वसंवेद्य महेश्वर! आपको नमस्कार है। १ ।

उत्पत्ति (सृष्टि), स्थिति (पालन और रक्षण) तथा संहार (लय) करने वाले, क्लेश, दैहिक, दैविक, भौतिक तापों का तथा जन्म–मरणस्वरूप दुःखों का नाश करने वाले, देवों के देव (महादेव) आपको नमस्कार है। हे परमात्मा (परमेश्वर)! आपको नमस्कार है। २ ।

(जीवात्मा–परमात्मा के सामरस्यरूप), योगमार्ग के प्रवर्तक, महायोगियों के ईश्वर (महायोगीश्वर) परात्पर (अखण्ड बोधस्वरूप), परिपूर्ण, समस्त जगत् में आनन्दरूप में अभिव्यक्त–जगदानन्दकारण, परमेश्वर! आपको नमस्कार है। ३ ।

योगामृत

तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षाकल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति । अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते। ५।

उन दोनों में से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष–ये सब अपरा विद्या हैं तथा जिससे वह अविनाशी परब्रह्म तत्वतः जाना जाता है, वह परा विद्या है। ५।

यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुः श्रोत्रं तदपाणिपादम्। नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मं तदव्ययं यद् भूतयोनिं परिपश्यन्ति धीराः। ६।

वह जो जानने में न आने वाला, पकड़ने में न आने वाला, गोत्र, रंग, आकृति, नेत्र–कान आदि ज्ञानेन्द्रियों, हाथ–पैर आदि कर्मेन्द्रियों से रहित है तथा जो नित्य, सर्वव्यापी, सर्वगत, अत्यन्त सूक्ष्म, अविनाशी परब्रह्म है, उस समस्त प्राणियों के परम कारण को ज्ञानीजन सर्वत्र परिपूर्ण देखते हैं। ६।

यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च यथापृथिव्यामोषधयः सम्भवन्ति।
यथा सतः पुरुषात्केशलोमानि तथाक्षरात्सम्भवतीह विश्वम्। ७।

जिस प्रकार मकड़ी जाल को बनाती और निगल जाती है, जिस प्रकार पृथ्वी में विविध प्रकार की औषधियाँ उत्पन्न होती हैं, जिस प्रकार जीवित मनुष्य से केश, रोयें आदि उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार अविनाशी परब्रह्म से विश्व–सब कुछ उत्पन्न होता है। ७।

तपसा चीयते ब्रह्म ततोऽन्नमभिजायते। अन्नात्प्राणो मनः सत्यं लोकाः कर्मसु चामृतम्। ८।

परब्रह्म तप से वृद्धि को प्राप्त होता है, उससे अन्न उत्पन्न होता है, अन्न से प्राण, मन, सत्य (पाँच महाभूत), समस्तलोक और कर्म तथा कर्मों से अमृत–अवश्यम्भावी सुखदुखरूप फल उत्पन्न होता है। ८।

यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयं तपः। तस्मादेतद् ब्रह्म नाम रूपमन्नं च जायते। ९।

जो सर्वज्ञ तथा सबको जानने वाला है, जिसका ज्ञानमय तप है, उसी परमेश्वर से यह विराट् रूप जगत् तथा नाम, रूप, अन्न (भोजन) उत्पन्न होते हैं। ६।

(मुण्डकोपनिषद् १।१।५–९)
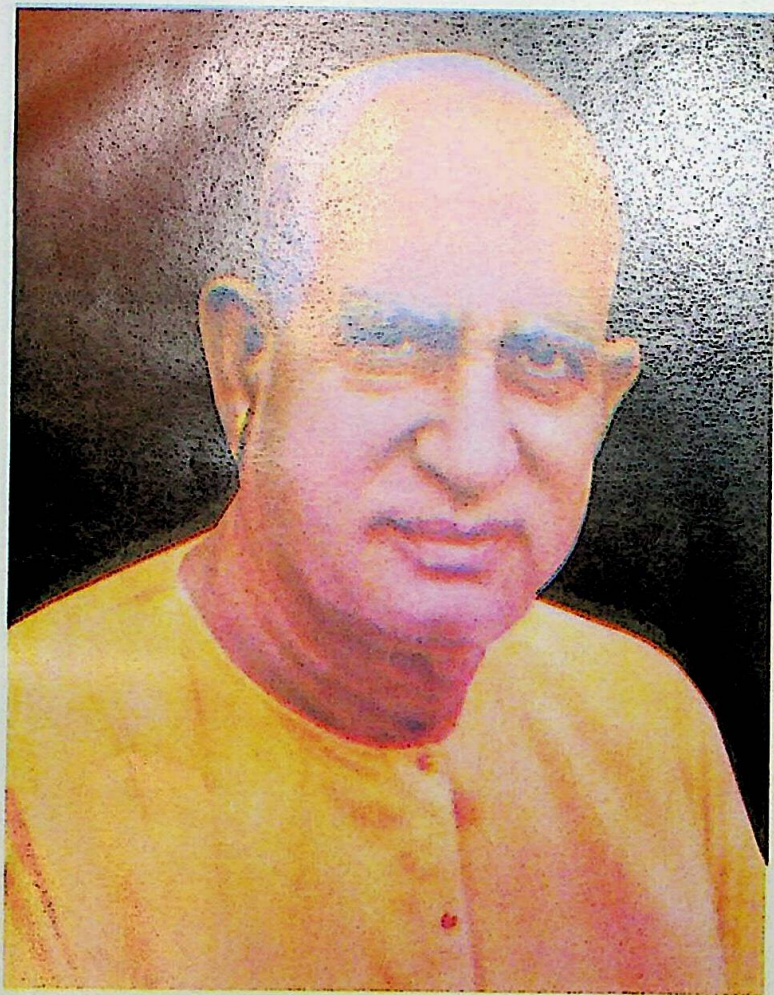
युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज
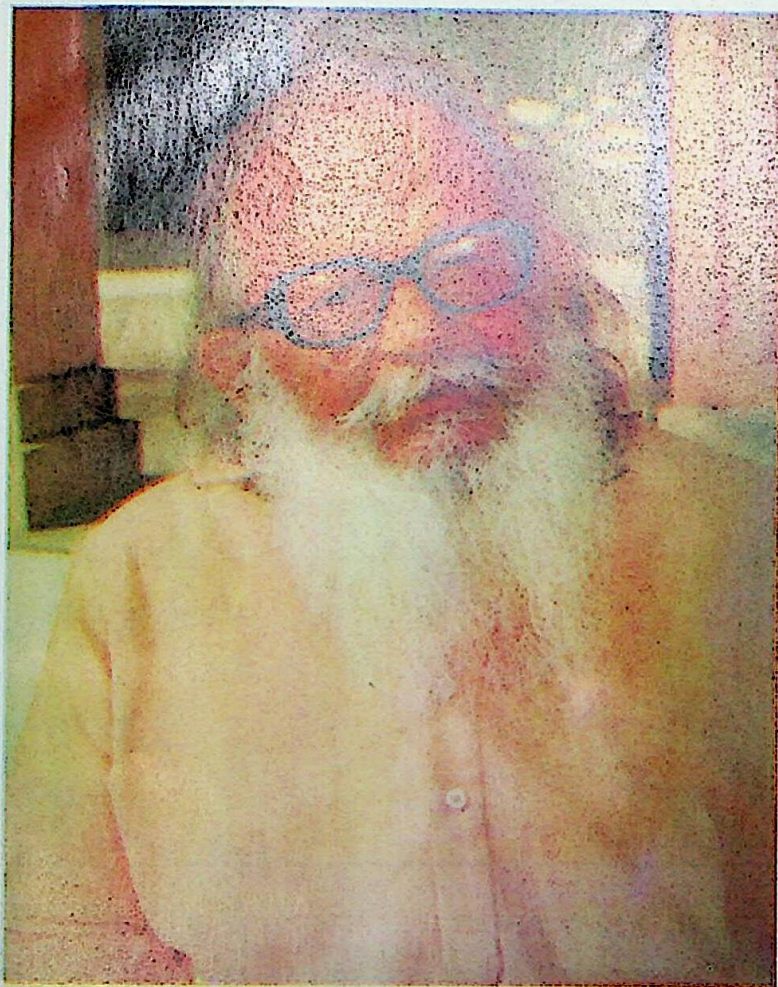
ब्रह्मलीन राष्ट्र संत महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

विषयानुक्रम

□ जब तक अपना अन्तःकरण बिल्कुल शुद्ध न हो, अर्थात् वासना रूपी विकार से निर्मल न हो चुका हो, तब तक उसे किसी को उपदेश करने का कोई हक नहीं है।

–महात्मा मंगतराम

गोरखबानी

महंमद महंमद न करि क़ाजी महंमद का विषम विचारं।
महंमद हाथि करद जे होती लोहै घड़ी न सारं।।

हे काजी! परमात्मा के सन्देशवाहक रसूलमुहम्मद साहब के विचार बड़े ही निगूढ़ और रहस्यपूर्ण थे। उनके पवित्र शब्दों का रहस्य अत्यन्त मार्मिक है। मुहम्मद साहब ने तो भगवत् प्रेम का मार्ग प्रशस्त किया, उन्होंने जीव की हिंसा का प्रतिपादन नहीं किया, उनके हाथ में जो छूरी (शस्त्र) थीं, वह लोहे या इस्पात की बनी हुई नहीं थी, वह तो (प्राणिमात्र के प्रति कल्याण) से निर्मित दिव्य शब्दों की शक्ति थी।

सबदै मारी सबदँ जिलाई ऐसा महंमद पीरं।
ताकै भरमि न भूलौ काजी सो बल नहीं सरीरं।।

हे काजी! इस्लाम के प्रवर्तक मुहम्मद साहब ने अपने शब्दों में शुद्ध अध्यात्म का प्रतिपादन किया। उनके आध्यात्मिक दिव्य सदुपदेशों से जीवात्मा की भौतिक, मायिकआसक्ति का नाश होता है तथा आत्मिक की शक्ति प्राप्त होती है। सदुपदेश अथवा शब्द की ओट लेकर स्थूल बुद्धि से उनकी नकल (अनुकरण) करने से उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा। तुम्हारे शरीर में वह बल नहीं है, जो आध्यात्मिक बल कहा गया है और जो मुहम्मद साहब को सहज प्राप्त था।

योग महात्म्य

यह सच है कि जीवात्मा के आधिदैविक, आधिदैहिक और आधिभौतिक तीनों तापों की निवृत्ति परमात्मा की प्राप्ति से होती है। परमात्मा अमृतस्वरूप हैं, सच्चिदानन्दघन ज्योति-ब्रह्म हैं। इस निराकार शून्य पद-सहस्रार में रमण करने वाले परम चैतन्य की अनुभूति अथवा प्राप्ति अथवा साक्षात्कार अथवा दर्शन योग के ही माध्यम से सहज-सुलभ और सुगम है।

यह सच है कि देह में स्थित परमात्म तत्त्व ब्रह्माण्ड में अभिव्यक्त और व्यापक है। पिण्डब्रह्माण्डैक्य का अनुभव योग के धरातल पर सिद्ध पुरुषों और योगदर्शन के मनीषियों और महर्षियों द्वारा अनादि काल से होता आ रहा है और यह क्रम अनन्त काल तक चलता रहेगा। देह प्राप्त कर उसमें परमात्म ज्ञान का अनुभव कर लेना, नित्य चेतनामृत का रसास्वादन कर लेना ही मनुष्य के रूप में जन्म लेने की महती सार्थकता है अन्यथा इसके अभाव में सब कुछ महाविनाश का ही दृश्यमात्र है।

यह सच है कि अध्यात्म ही जीवन का परम श्रेयस्कर धरातल है, जिसके आश्रय से पुरुषार्थ चतुष्टय धर्म, अर्थ और मोक्ष की सहज सिद्धि तो उपलब्ध होती ही है, साथ-ही-साथ इन चारो जीवन-तत्वों के परे प्रतिष्ठित ब्रह्मानन्द का परम सुखास्वाद - अमृतरस अथवा महारस को योग-साधना द्वारा इसी देह में, इसी लोक में प्राप्त कर मनुष्य अपने इहलोक तथा निष्काम परमार्थ सबका यथार्थ लाभ प्राप्त कर लेता है।

यह सच है कि विश्व के समस्त प्राणी मात्र को निष्पक्ष और निष्काम

भाव से एक सम्बन्धसूत्र में आबद्ध करने का उपाय योग ही है। यह किसी विशेष सम्प्रदाय, जाति, धर्म, देश या वर्ग का ही स्वत्व नहीं है। योग-ज्ञान और उसकी साधना के अनुरूप जीवन का निर्माण करना सबका अधिकार है। यह सच है कि विश्व में भौतिकवाद और जड़विज्ञान की प्रगति से मानव सुख-मुखी हो चला है। यह सुख क्षणिक है, अस्थायी है। वास्तविक आत्मशान्ति अथवा निश्चिन्तता और सुख की स्थिति तो योग से ही मिलती है।

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः॥

पहले भी, जिनके राग, भय और क्रोध सर्वथा नष्ट हो गये थे और जो मुझमें अनन्य प्रेमपूर्वक स्थित रहते थे, ऐसे मेरे आश्रित रहने वाले बहुत से भक्त उपर्युक्त ज्ञान रूप तप से पवित्र होकर मेरे स्वरूप को प्राप्त हो चुके हैं।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥

हे अर्जुन! जो भक्त मुझे जिस प्रकार भजते हैं, मैं भी उनको उसी प्रकार भजता हूँ, क्योंकि सभी मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करते हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता ४/१०-११
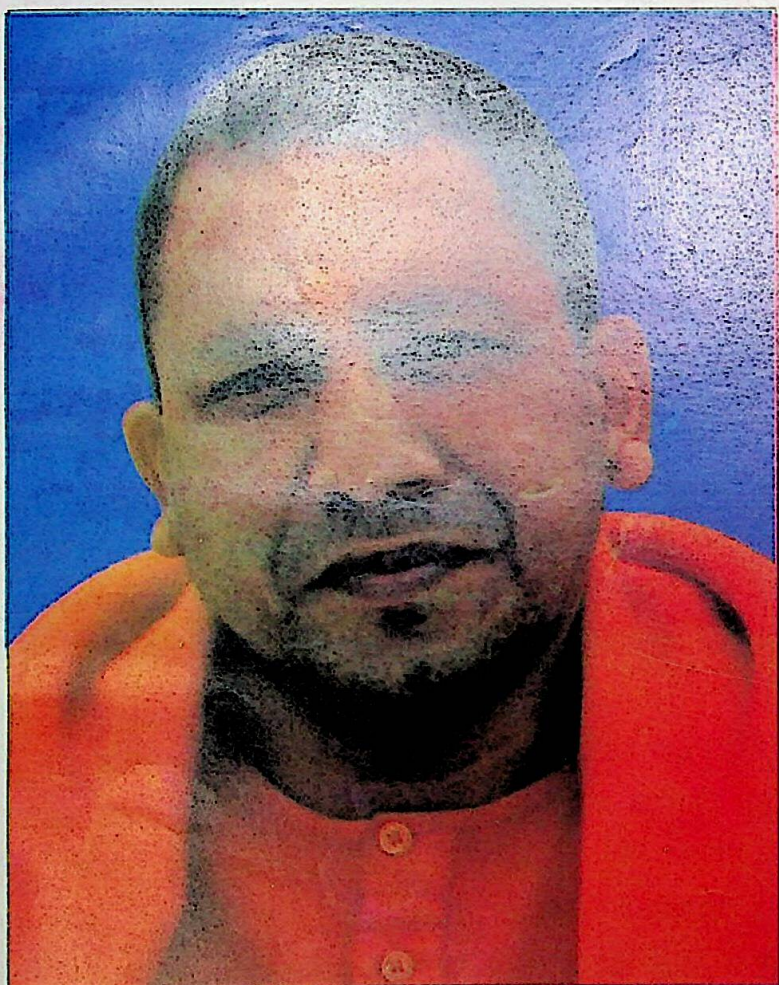
महंत योगी आदित्यनाथजी महाराज
गोरक्षपीठाधीश्वर

षट्कर्म

□ महन्त योगी आदित्यनाथ

प्रकृति और स्वास्थ्य का अति सन्निकट का सम्बन्ध है। उत्तम स्वास्थ्य प्रकृति के साथ ही प्राप्त हो सकता है। मूल प्रकृति के त्रिगुणात्मक होने से प्राणि मात्र के शरीर भी वात, पित्त और कफ इन त्रिधातुओं के नाना प्रकार के रूपान्तरों के सम्मिश्रण हैं। आयुर्वेद में स्वास्थ्य की परिभाषा वात, पित्त और कफ के सन्तुलन से की गई है –

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥

अर्थात् जब वात, पित्त और कफ सन्तुलित हों, शरीरगत अग्नि सम हो, सप्त–धातु और मल–निष्कासन–क्रिया सम अवस्था में हो तथा पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ, मन और आत्मा प्रसन्न हों तब ही मनुष्य स्वस्थ है, ऐसा कहा जाता है।

कुछ शरीर वातप्रधान, कुछ पित्तप्रधान और कुछ कफप्रधान होते हैं। वातप्रधान शरीरों में आहार–विहार के दोष से तथा देश–कालादि हेतु से प्रायः वातवृद्धि हो जाती है, पित्त–प्रधान शरीरों में पित्त–विकृति और कफ–प्रधान शरीरों में प्रायः कफ–प्रकोप हो जाता है जिससे दूषित श्लेष्मा, आमवृद्धि या मेद का संग्रह हो जाता है, जबकि शरीर में वात, पित्त, कफ क्रमशः ४:२:१ के अनुपात में हो तभी सम अवस्था मानी जाती है। इस अनुपात में जब भी असन्तुलन होता है तब शरीर में विकार उत्पन्न हो जाता है। इन विकारों के लिये तथा देह को पूर्ववत् स्वस्थ बनाने के लिये जैसे आयुर्वेद में स्नेहन, स्वेदन के अतिरिक्त वमन, विरेचन, वस्ति,

---

* गोरक्षपीठाधीश्वर श्रीगोरक्षपीठ, गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

नस्य और अनुवासन ये पंचकर्म बताये गये हैं-वैसे ही हठयोग के आचार्यों ने भी शरीर-शोधन के लिये षट्कर्म बताये हैं। षट्कर्म हठयोग का प्रथम साधन है। इसके द्वारा शरीर के मलों एवं विषाक्त तत्त्वों को दूर किया जाता है। हठयोग की ये ६ क्रियायें जिन्हें षट्कर्म कहते हैं इस प्रकार हैं:-

धौतिर्वस्तिस्तथा नेतिनौंलिकंत्राटकस्तथा।
कपालभातिश्चैतानि षट्कर्माणि समाचरेत्॥

अर्थात् योग के लिये धौति, वस्ति, नेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति इन षट्कर्मों का अभ्यास करना चाहिए।

षट्कर्म की इन क्रियाओं द्वारा विभिन्न प्रकार के कफ, वात और पित्त-जनित दोषों को, कण्ठ, प्लीहा, फेफड़े तथा उदर आदि के आन्तरिक विकारों को दूर कर शरीर को पूर्ण रूप से नीरोग रखा जा सकता है। इस कायशोधन से शरीर स्वस्थ रहता है और सभी नाड़ियाँ मलरहित होती हैं। इस प्रकार षट्कर्मों की उपयोगिता केवल शरीर-शोधन में ही नहीं अपितु शोधित शरीर से किये गये योगाभ्यास से कुण्डलिनी-जागरण तथा षट्चक्रभेदन पूर्वक शिव-शक्ति के समरसीकरण की अभीष्ट सिद्धि में भी है। अत: इनका क्रमश: विस्तृत निरूपण आवश्यक है।

१. धौति-धौति शब्द का अर्थ है-धोना या साफ करना। योग-शास्त्र में षट्कर्मों के अन्तर्गत मुंह से लेकर गुदा द्वार तक विधिवत् आन्तरिक सफाई करना धौति क्रिया कहलाती है। काया-शोधन की यह एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है। मुख्य रूप से धौति-कर्म चार प्रकार का माना गया है। यथा-

अन्तर्धौतिर्दन्त-धौतिर्हृद्धौतिर्मूलशोधनम् ।
धौतिश्चतुर्विधाकृत्वा घटं कुर्वन्ति निर्मलम्॥

अर्थात् अन्तर्धौति, दन्त-धौति, हृदयधौति और मूल-शोधन के भेद से धौति-कर्म चार प्रकार का है जिसके द्वारा साधक अपने शरीर को स्वच्छ (स्वस्थ) बनाते हैं। इससे अपच, मलावरोध, अतिसार, संग्रहणी आदि

विकार तो दूर होते ही हैं, साथ ही उदरस्थ फोड़ों तक को धौति कर्म से ठीक किया जा सकता है। इन चारों का विवरण इस प्रकार है-

(क) अन्तर्धौति-इसका शाब्दिक अर्थ है भीतर की सफाई। अतः जिस धौति से शरीर के भीतर प्रक्षालन किया जाता है उसे अन्तर्धौति कहते हैं। इसके भी चार प्रकार हैं। यथा-

वातसारं वारिसारं वहि्नसारं बहिस्कृतम्।
घटस्य निर्मलतार्थम् अन्तर्धौतिश्चतुर्विधा।।

अर्थात्-वातसार, वारिसर, वहिन्सार और बहिष्कृत भेद से अन्तर्धौति चार प्रकार की होती है।

वातसार अन्तर्धौति-इसमें सिद्धासन, पद्मासन या वज्रासन में बैठ कर दोनों होठों को कौवे की चोंच की तरह करके धीरे-धीरे पेट में वायु भरते हैं। वायुपान करने के बाद कुम्भक (श्वास रोकने की क्रिया) की स्थिति में पेट के अन्दर की वायु का चारों ओर संचालन करते हैं। उसके पश्चात् धीरे-धीरे नासिका से उस वायु को निकाल देते हैं। अन्दर की वायु को चलाने से संबंधित होने के कारण इसे वातसार अन्तर्धौति कहते हैं। इस क्रिया को काकी-मुद्रा या काकी-प्राणायाम भी कहते हैं।

लाभ-यह क्रिया-

(क) जठराग्नि को प्रदीप्त करके क्षुधा-वृद्धि कर, मंदाग्नि आदि को दूर करती है।

(ख) शरीर को सब रोगों से रहित करके स्वस्थ बनाती है।

(ग) मुंह, जीभ, टान्सिल आदि गले के रोगों में लाभदायक है।

(घ) इस क्रिया के सिद्ध होने पर दूर-श्रवण, दूर-दर्शन और आत्मदर्शन की शक्ति प्राप्त होती है।

वारिसार अन्तर्धौति-वारि अर्थात् जल सार अर्थात् चलाना। इस प्रकार मुंह से धीरे-धीरे जल पीने, उसे परिचालित करके जल को गुदा

द्वार से बाहर निकालने की क्रिया को वारिसार अन्तधौंति कहते हैं। इससे आँतों की सफाई होती है। यह शंख धौति का एक प्रमुख अंग है।

शंख-धौति अथवा शंख-प्रक्षालन : आँतों को पूर्ण रूप से जिस क्रिया से स्वच्छ किया जाता है, उसे शंख-धौति अथवा शंख-प्रक्षालन कहते हैं। इस क्रिया से मुंह से लेकर गुदा तक शरीर की विधिवत् सफाई-धुलाई होती है। चूँकि आँतों की आकृति शंखनुमा होती है इसलिये आँतों को शंख भी कहा जाता है। अतः इस क्रिया से आँतों की सफाई को शंख-धौति अथवा शंख-प्रक्षालन भी कहते हैं। यह काया-कल्प की एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है। शरीर-शोधन एवं शारीरिक स्वास्थ्य के लिये इस क्रिया के चमत्कारिक प्रभाव व लाभ प्राप्त हुए हैं। एक प्रकार से यह शरीर रूपी मशीन की सर्विसिंग तथा ओवरहालिंग जैसी क्रिया है जो उस मशीन को नवजीवन प्रदान करती है। इस क्रिया के सम्बन्ध में महायोगी गुरु गोरक्षनाथजी ने कहा है-

आहार तोड़ौ निद्रा मोड़ौ कबहुँ न होइबा रोगी।
छठै छमासै काया पलटिबा ज्यूँ कोइ बिरला बिजोगी।।

मिताहार, यथोचित निद्रा और छःछः माह के अन्तर में काया-कल्प के द्वारा शरीर को नीरोग रखते हुए योगी अपनी साधना में सिद्धि प्राप्त करता है।

साँस उसाँस बाई को भषिबा, रोकि लेहु नव द्वारं।
छठै छमासे काया पलटिबा, तब उनमनी जोग अपारं।।

कुम्भक प्राणायाम के द्वारा शरीर के भीतर श्वासोच्छ्वास का भक्षण करना चाहिए। इस कार्य में जितनी अधिक सफलता मिलेगी, उतनी ही प्राणशक्ति अक्षुण्ण होती जायेगी और मृत्यु का भय दूर होता जायेगा। नवों द्वारों को रोककर वायु के शरीर में पचा लेने से काया-कल्प तो अनायास हो ही जाता है, और साथ ही साथ साल

भर में दो बार छः छः माह की अवधि में योगिक विधि से काया-कल्प करने से शरीर में परिष्कृत ऊर्जस्वल प्राण दौड़ने लगता है। इससे उन्मनी-योग सिद्ध होता है। मन स्थिर हो जाता है, ब्रह्मरन्ध्र-दशवें द्वार-के खुल जाने पर निष्कल, निरंजन, चिन्मय, परमात्मतत्त्व प्रकाशित हो उठता है। इस तरह उन्मनी अवस्था सिद्ध होती है।

अस्तु जिस दिन शंख-प्रक्षालन करना हो उसके पहले दिन रात्रि में हल्का सुपाच्य भोजन ही लेना चाहिए। रात्रि में पीने के लिये जल का अधिक से अधिक प्रयोग करें। सुबह सूर्योदय से पूर्व नित्य-क्रिया से निवृत्त होने के बाद एक गिलास नमकीन गरम पानी पी कर ५-५ बार निम्नलिखित आसनों का अभ्यास करें-

ताड़ासन-दोनों पैर मिलाकर खड़े हो जाइए, दोनों हाथ की अँगुलियों को आपस में फँसा कर हथेली को सिर की सीध में ऊपर रखिए। श्वास अन्दर लेते हुए पंजे के बल खड़े हो जाइए तथा हथेली को उल्टा कर के यानी आसमान की ओर रखते हुए पूरे शरीर को ऊपर की ओर तानें। दृष्टि सामने रखें तथा श्वास अन्दर रोक कर (जितनी देर हो सके) फिर श्वास छोड़ते हुए वापस आ जावें। ताड़ वृक्ष की सी स्थिति के कारण इसे ताड़ासन कहते हैं।
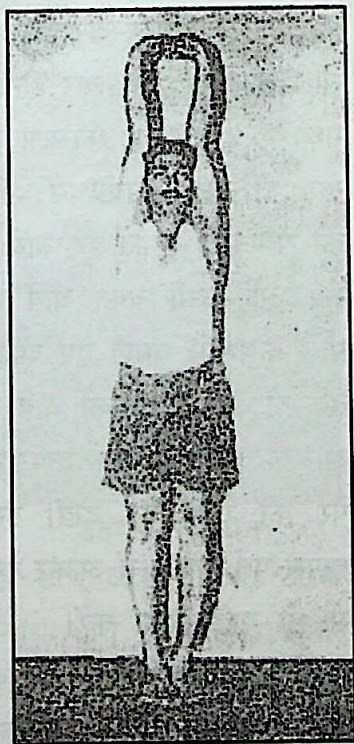
ताड़ासन

तिर्यक् ताड़ासन-दोनों पैरों

तिर्यक् ताड़ासन

के मध्य एक से डेढ़ फुट का फासला रखते हुए दोनों हाथों की अँगुलियों को आपस में फँसा कर हथेली को सिर के ऊपर सीधा ऊपर उठा कर खड़े हो जाइए। कमर के ऊपर के हिस्से (धड़) को दायीं तरफ झुकायें, फिर पूर्व अवस्था में आकर बायीं ओर इसी प्रकार झुकाइये, हाथ सीधा रखें, मोड़ें नहीं।
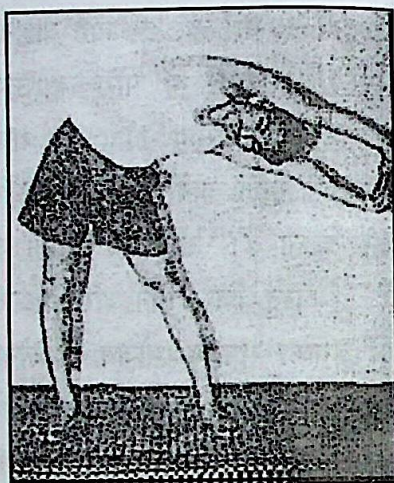
कटिचक्रासन

कटिचक्रासन–दोनों हाथों को सामने सीधे बाजू से फैला कर दोनों पैरों के मध्य २-३ फुट का फासला रखते हुए खड़े हो जाइए। सर्वप्रथम दाहिने हाथ को सामने से घुमाते हुए बायें कंधे पर रखें और उसी वक्त बायें हाथ को पीछे कमर से घुमाते हुए दाहिनी जाँघ तक ले आयें, सिर को बायें कंधे की ओर ले जाकर कंधे के ऊपर से दाहिने पैर की एड़ी को देखें। इसी तरह वापस पूर्व स्थिति में आकर दूसरी ओर से भी यही क्रिया करें।

तिर्यक् भुजंगासन–पेट के बल लेट कर दोनों हथेलियों को अपने दोनो बगल में छाती के समकक्ष रखें। दोनों कोहनियाँ पीठ से लगी हुई हों, सिर जमीन पर रहे, दोनों पैरों के बीच डेढ़ से दो फुट की जगह

हो तथा पंजा जमीन से सुलाकर रखें। श्वास लेते हुए धीरे-धीरे नाभि से ऊपर गर्दन, छाती व सिर को जमीन से ऊपर उठा कर सिर को बायें कन्धे की ओर मोड़ कर दाहिने पैर की एड़ी को देखने का प्रयत्न करें। सिर को पूर्व की स्थिति में लाकर श्वास छोड़ते हुए सामान्य स्थिति में आ जायें। पुनः इस क्रिया को दूसरी ओर से करें।
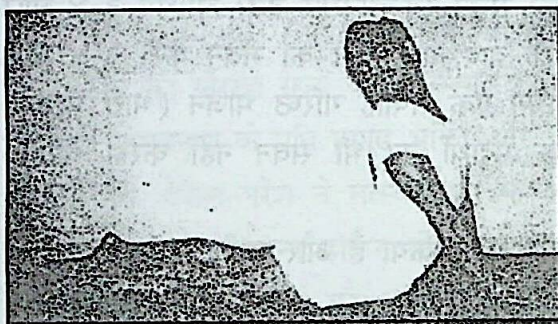
तिर्यक् भुजंगासन

उदराकर्षणासन-ऐसे बैठें कि दोनों पैरों के बीच फासला रहे। फिर दोनों हाथ घुटने पर रखें तथा बायीं एड़ी को उठाते हुए घुटने को दाहिने पंज़े के पास तक लायें और कंधे के ऊपर से पीछे की ओर देखने की चेष्टा करें। यही क्रिया स्थिति बदल कर भी करें।

उदराकर्षणासन

हर ५-५ बार अभ्यास के बाद १-२ गिलास हल्का गरम नमकीन जल पी लें। लगभग २ लीटर गरम नमकीन जल पी लेने पर अभ्यास के बाद शौच अवश्य जायें। उसके बाद पुनः गरम नमकीन जल पीकर अभ्यास जारी रखें। ३-४ लीटर जल पी लेने पर शौच की जरुरत महसूस होगी। शौच भी पहले सूखी, फिर गीली, फिर पतली तत् पश्चात् कणयुक्त जलीय और

अन्त में जल के समान साफ होने लगेगी। नमकीन गरम जल का अभ्यास तब तक जारी रखना चाहिए जब तक शौच पानी की तरह नहीं आने लग जाय। इसके बाद ५-७ गिलास साफ गरम जल पीकर कुंजर क्रिया कर लेनी चाहिए। तत् पश्चात् एक घण्टे तक कुछ भी सेवन न करें। एक घण्टे के बाद शुद्ध देशी घी में पकाई हुई मूंग की दाल की खिचड़ी का सेवन स्वेच्छानुसार करें। लगभग ३-४ घण्टे पूरी तरह आराम करने के बाद अन्न-जल का सेवन करें। ३-४ घण्टे तक सोयें भी नहीं। लगभग एक सप्ताह गरिष्ठ भोजन (भारी भोजन) चाय तथा नशीले मादक पदार्थों का भी सेवन नहीं करना चाहिए।

लाभ-यह क्रिया-

१. शरीर-शोधन की उत्तम क्रिया है और सभी प्रकार के रोग दूर करने में सक्षम है।

२. कब्ज, मंदाग्नि को दूर कर आँतों के साथ मांस पेशियों को भी सक्रिय एवं मजबूत बनाती है।

३. रक्त के शुद्धीकरण में सहायक है।

४. मधुमेह, श्वास रोग, अपेन्डिसाइटिस, सिरदर्द, मुख, आँख, गला, जिह्वा और दन्त रोगों में लाभकारी है।

विशेष :

१. सामान्यजनों को तीन या छः माह में एक बार इसका अवश्य अभ्यास करना चाहिए।

२. मधुमेह के रोगियों को पन्द्रह दिन में एक बार इसका अभ्यास करना चाहिए।

३. कुष्ठ रोगियों को सप्ताह में दो दिन इसका अभ्यास करना चाहिए।

४. बहुत कमजोर व्यक्ति, प्रसूता महिला, गुर्दे, अल्सर, ऊँचे या नीचे रक्तचाप तथा हृदय व रोगियों को इसका अभ्यास नहीं करना चाहिए।

क्रमशः ....

योगेश्वर मत्स्येन्द्रनाथ

□ रामलाल श्रीवास्तव*

(अप्रैल अंक से आगे)

नेपाल का गोरखा राज्य योगाचार्य मत्स्येन्द्रनाथ और उनके अनुवर्ती महायोगी गोरखनाथ के प्रति प्रगाढ़ भक्ति और श्रद्धा का प्रतीक है। कहा जाता है कि नेपाल-नरेश ने मत्स्येन्द्रनाथ के अनुयायियों पर अत्याचार किया था, इससे अप्रसन्न होकर श्रीगोरखनाथ नवनागों को समेट कर बैठ गये और बारह साल का अकाल उत्पन्न किया। नेपाल नरेश ने श्री मत्स्येन्द्रनाथ के सम्मान में यात्रा-उत्सव किया, उनकी कृपा से श्री गोरखनाथ ने नेपाल को अकाल-मुक्त कर दिया। उपर्युक्त यात्रा-उत्सव के सन्दर्भ में नेपाल में अनेक जनश्रुतियां और किम्बदन्तियां प्रचलित हैं। पर उनका मुख्य तात्पर्य है नेपाली जीवन में श्रीमत्स्येन्द्रनाथ के योगज्ञान का महत्व और प्रभाव प्रकट करना। नेपाल में वे अवलोकितेश्वर के रूप में पूज्य हैं।

नेपाली बौद्ध कथा में मत्स्येन्द्रनाथ को अवलोकितेश्वर समझा गया है। मत्स्येन्द्रनाथ एक पर्वत पर रहते थे, गोरखनाथ उनके दर्शन के लिए गये, पर्वत पर चढ़ना दुष्कर समझ कर नव नागों को बांधकर वे बैठ गये, इससे नेपाल में बारह साल तक वंर्षा नहीं हुई। राजा नरेन्द्रदेव के गुरु बुद्धदत्त (बन्धुदत्त) अकाल का कारण समझ गये और अवलोकितेश्वर को ले आने का संकल्प कर वे कपोतक पर्वत पर गये। अलोकितेश्वर ने उनकी सेवा से प्रसन्न होकर एक मंत्र दिया और कहा कि इसके

---

* पूर्व सम्पादक, योगवाणी

जपसे आकृष्ट होकर मैं जपकर्ता के पास उपस्थित हो जाऊँगा। लौटकर बुद्धदत्त ने मंत्र-जप का अनुष्ठान किया, मंत्र-शक्ति के प्रभाव से अवलोकितेश्वर ने भृंग के रूप में कमण्डलु में प्रवेश किया। उस समय राजा नरेन्द्रदेव सो रहे थे। बुद्धदत्त ने उन्हें जगाकर कमण्डलु का मुख बन्द कर देने का संकेत किया। ऐसा करने से अवलोकितेश्वर कमण्डलु में बंधे रह गये और नेपाल में प्रचुर वर्षा होने से अकाल समाप्त हो गया। तभी से बुगम नामक स्थान में आज भी मत्स्येन्द्रनाथ का यात्रा-उत्सव सम्पन्न होता है।

उपर्युक्त आख्यान का ऐसा भी वर्णन मिलता है कि गोरखनाथ ने एक पर्वत पर वर्षा के देवता कर्कोटक नाग को दबाया, नेपाल में वर्षा न होने से अकाल पड़ गया। राजा ने आचार्य बुद्धदत्त को मत्स्येन्द्रनाथ को लाने के लिए भेजा, वे आये, गुरु के सम्मान में गोरखनाथ उठ खड़े हुए, उठते ही बादल छूट गये, वर्षा हुई। मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा किए गए इस उपकार की स्मृति में उत्सव-यात्रा प्रवर्तित हुई। नेपाल का मृगस्थली स्थान नाथ-परम्परा में एक पवित्र तीर्थस्थल माना गया है, कहा जाता है कि मृगस्थली में गोरखनाथ जी किसी कारण से छानबे करोड़ मेघमालाओं को अपने आसन में दवाकर वैठ गये थे। वर्षा बन्द हो गई। राजा ने शास्त्रज्ञान के विचार से उपाय स्थिर किया कि जब सिंहल से गोरखनाथ जी के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ जी पधारेंगे तब वे उन्हें प्रणाम करने उठेंगे और मेघमालायें मुक्त होकर वृष्टि करेंगी; यथोचित अनुष्ठान द्वारा सिंहल से मत्स्येन्द्रनाथ जी मृगस्थली में गोरखनाथ जी के समक्ष लाये गये। श्री गोरखनाथ उठे नहीं, केवल मानसिक प्रणाम किया। मानसिक प्रणाम की क्रिया से उनका बायाँ घुटना कुछ हिल गया, जिसके परिणामस्वरूप एक मेघमाला मुक्त हो गयी और वर्षा हुई। उसी समय से यह स्थान नाथ-सम्प्रदाय और गोरखाराज्य नेपाल के लिए

पूज्यपीठ हो गया।

काठमाण्डू से तीन मील की दूरी पर वागमती गंगा के किनारे मत्स्येन्द्रनाथ का मन्दिर है। भोगपत्तन में मत्स्येन्द्रनाथ जी की मंजूषा की पूजा होती है। नेपाल नरेश के कमण्डलु में भृंगरूप से प्रवेश करने के कारण मत्स्येन्द्रनाथ को भृंगुनाथ कहा जाता है। कौलज्ञान निर्णय में मत्स्येन्द्रनाथ को भृंगपाद कहा गया है।

मत्स्येन्द्रनाथ की प्रशस्ति में श्रीमद् आचार्य नीलकण्ठाचार्य ने मत्स्येन्द्र–पद्यशतक की संस्कृत भाषा में सम्वत् १७३३ वि. में रचना की, जिसमें उन्होंने श्रीमत्स्येन्द्र के चरणदेश में महती श्रद्धा व्यक्त करते हुए नेपाल नरेश के लिये उनसे आशीर्वाद की याचना की है, इसमें नेपाल के अनेक शासकों के संदर्भ उपलब्ध होते हैं और इसे ऐतिहासिक काव्यात्मक प्रशस्ति कहने में कोई आपत्ति नहीं है। इसके रचयिता नीलकण्ठ भट्ट ललित पत्तन के महाराज श्रीनिवास मल्ल के आश्रित थे, वे महान् विद्वान् थे, उन्होंने इस शतक में नेपाल सम्बन्धी मत्स्येन्द्रचरित का बड़ी पटुता से समावेश कर दिया है। इसमें मत्स्येन्द्रनाथ को नेपाल लाने वाले और उनके यात्रा–उत्सव का संयोजन करने वाले महाराज नरेन्द्रदेव का ऐतिहासिक विवरण भी उपलब्ध होता है। आचार्य नीलकण्ठ की मार्मिक उक्ति है :

नमद्देवमौलिस्थचञ्चत्किरीटस्थितानन्तरत्नप्रभासङ्गमेन ।
नरवेन्दुप्रभाणांविचित्राविरासीदभिरव्या कथं तां वयं वर्णयामः।

(मत्स्येन्द्रपद्यशतक ३९)

हे मत्स्येन्द्र! आप को नमस्कार करते हुए देवताओं के मस्तक पर विराजमान उज्ज्वल मुकुट में जड़े रत्नों की प्रभा से युक्त आपके चरण कमल के नखचन्द्र की कान्तियों से उत्पन्न शोभा का हम क्या, शेष भी वर्णन करने में असमर्थ हैं।

मत्स्येन्द्रनाथ अकारण करुण हैं, उनकी कृपा सभी धर्मवालों और विभिन्न अध्यात्म-मार्ग पर चलने वालों पर एक समान है। महामति नीलकण्ठ का उद्‌गार है;

परे बौद्धमार्गैः परे श्रौतमार्गैः परे शैवशाक्तार्कवैनायकाद्यैः।
भवन्तं भजन्तेऽयनैः किन्तु तेषां प्रसादं करोष्येव मत्स्येन्द्रनाथ॥

(मत्स्येन्द्रपद्यशतक ६७)

हे मस्त्येन्द्रनाथ! कुछ लोग बौद्ध मार्ग (धर्म), कुछ लोग वैदिक मार्ग कुछ लोग शैव शाक्त, सौर और गाणपत्य मार्ग आदि का आश्रय लेकर आपका भजन करते हैं। हे देव! आप उन सभी पर प्रसन्न रहते हैं।

समस्त नेपाल देश में मत्स्येन्द्रनाथ को अप्रतिम सम्मान प्राप्त है। बारह साल के भयंकर अकाल और अनावृष्टि से उत्पीड़ित नेपाल को जलवृष्टि से प्राणान्वित करने का जो श्रेय उन्हें प्राप्त है, वह नेपाल के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में चिरकाल तक अंकित रहेगा। योगेश्वर मस्त्येन्द्रनाथ का चरित्र परम पवित्र और महाप्रासादिक है।

नेपाल नरेश नरेन्द्रदेव ने मत्स्येन्द्रनाथ के कामरूप पीठ से आकर नेपाल को अकाल मुक्त करने की स्मृति में उनकी यात्रा का उत्सव-संयोजन किया था। उन्होंने रथयात्रा, महास्नान यात्रा-उत्सव से मत्स्येन्द्रनाथ की पवित्र स्मृति को नेपाली जन-जीवन की सांस्कृतिक सम्पत्ति बना लिया। नेपाल में लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि मत्स्येन्द्र की यात्रा के समान ब्रह्माण्डमण्डल में दूसरी कोई यात्रा नहीं है।

'मत्स्येन्द्रस्य समा यात्रा नास्ति ब्रह्माण्डमण्डले।

नेपाल नरेश नरेन्द्रदेव ने श्री मत्स्येन्द्रनाथ का राष्ट्र-अधिष्ठाता के रूप में राजकीय मुद्रा पर नामांकन करवाया। श्री मत्स्येन्द्रनाथ की नामांकित मुद्रा कहीं-कहीं नेपाल में देखने को मिल जाती है।

श्री मत्स्येन्द्रनाथ की मुद्राओं पर 'श्रीश्रीलोकनाथः', 'श्रीश्रीलोकनाथाया', तथा 'श्रीश्रीकरुणामयः' शब्द अंकित हैं।

योगेश्वर मत्स्येन्द्रनाथ नेपाल तथा भारत के लिए ही नहीं, समस्त विश्व के लिए परम पूज्य हैं, उनका योगज्ञान-महाज्ञान विश्वमंगलकारी है। उनका योगदर्शन-सिद्धामृत मार्ग का सिद्धान्त सार्वभौम और सार्वजनिक है। श्री मत्स्येन्द्रनाथ अपनी रहनी और कहनी में समान थे। उनके दार्शनिक सिद्धान्त अथवा योगसाधना और योगज्ञान के सन्दर्भ में यह कहना युक्तिसंगत है कि उन्होंने शैव योगाचारपरक विचार को अपनी साधना की प्रारम्भिक अवस्था में कौल चिन्तन से प्राणित कर योग और तन्त्रगत शाक्ताचार का समन्वय कर योगिनी कौल मत का पोषण किया, उनका कौलज्ञान निर्णय ग्रन्थ योगिनी कौल मत का सिद्धान्त-वाङ्मय है और तदुपरान्त श्री गोरखनाथ के सत्प्रयास से उन्होंने महाज्ञान-शैव योग-चिन्तन अथवा ज्ञान से षडंग योग का वरण कर सिद्धमत-सिद्धामृत मार्ग अथवा नाथ-सम्प्रदाय को अनुप्राणित कर नाथ-योग की परम्परा की संपुष्टि की। 'कौलज्ञान निर्णय' ग्रन्थ के अनुसार श्री मत्स्येन्द्रनाथ कौलज्ञान सिद्धान्त के आदि प्रवर्तक हैं। उन्हें सकल कुलशास्त्र का अवतारक कहा गया है, कुलशास्त्र का तात्पर्य कौलज्ञान से है। 'कौलज्ञाननिर्णय' के चौदहवें पटल से परिलक्षित होता है कि भैरव (शिव) ऐसे ध्यान की बात बता रहे हैं जिसमें मन्त्र, प्राणायाम और चक्रध्यान की आवश्यकता नहीं होती है। शिवप्रोक्त यह ध्यान इस स्थिति में भी परम सिद्धिदायक होता है। कौलज्ञान निर्णय में उल्लेख है।

भक्तियुक्ताः समत्वेन सर्वे शृण्वन्तु कौलिकम्।
महाकौलात् सिद्धकौलं सिद्धकौलात् मसादरम्॥
चतुर्युगविभागेन अवतारं चोदितं मया॥
ज्ञानादौ निर्णितिः कौलं द्वितीये महत्संज्ञकम्।

तृतीये सिद्धामृतं नाम कलौ मत्स्योदरं प्रिये॥
ये चास्मिन्निर्गता देवि वर्णयिष्यामि तेऽखिलम्।
एतस्माद् योगिनीकौलात् नाम्ना ज्ञानस्य निर्णितौ॥
(कौलज्ञाननिर्णय १६। ४६-४६)

उपर्युक्त उद्धरण में शिव के चारों युग में चार अवतारों पर प्रकाश डाला गया है। कहा गया है कि सब लोग भक्तिपूर्वक श्रवण करें कि महाकौल के बाद सिद्धकौल और सिद्धकौल के बाद मसादर (मत्स्योदर-मत्स्येन्द्र) का अवतार हुआ। प्रथम सत्युग में शिव द्वारा निर्णीत ज्ञान का नाम कौल ज्ञान था, दूसरे युग त्रेता में उसका नाम सिद्ध कौल और तीसरे द्वापर युग में सिद्धामृत और चौथे कलियुग में मत्स्योदर था। मत्स्योदर विनिर्गत ज्ञान ही योगिनी क़ौल-ज्ञान कहा जाता है। योग़िनी कौलमार्ग-अनुवर्तन के पहले मत्स्येन्द्रनाथ सिद्धकौल मत के पोषक थे। नाथ-परम्परा में सिद्धकौल मत ही मान्य है। यह निर्विवाद है कि गोरक्ष सम्प्रदाय के योगमार्ग और मत्स्येन्द्र प्रवर्तित कौल मार्ग के चरम लक्ष्य में कोई भेद नहीं है, विशेष बात यह है कि योगी पहले से ही अन्तरंग उपासना करने लगता है पर कौलमतानुयायी (तांत्रिक) बहिरंग उपासना करने के बाद क्रमशः अन्तरंग साधना-कुण्डिलिनी-जागृति की दिशा में प्रवृत होता है।

कौल ज्ञान के अनुसार ज्ञान स्वप्रकाश है; भिन्न-भिन्न द्रव्य को प्रकाशित करने के लिये दीप की आवश्यकता होती है पर दीप स्वप्रकाश है। ज्ञान अपने को आप ही प्रकाशित करता है। यह जगत् ज़ात, ज्ञेय और ज्ञान रूप में त्रिपुटीकृत है, इस त्रिपुटीकृत जगत् के समस्त पदार्थ ज्ञानरूप धर्म के एक होने के कारण सजातीय हैं, इसलिए वे कुल-जाति कहे जाते हैं। कुलसम्बन्धी यह ज्ञान ही कौलज्ञान है। ब्रह्म ज्ञानस्वरूप है, जगत् ब्रह्मम़य है, ब्रह्म से अभिन्न है-यह अद्वैतज्ञान ही मत्स्येन्द्र के कौलमत में कौलज्ञान है। कुल शब्द का एक योगपरक अर्थ बताया जाता

है कि 'कु' का अर्थ पृथ्वी है, 'ल' का अर्थ लीन होना। पृथ्वी तत्व-मूलाधार चक्र में अवस्थित है, मूलाधार चक्र ही कुल कहा जाता है, इस मूलाधार से सुषुम्ना नाड़ी मिली है, जिसके भीतर से उठकर कुण्डलिनी सहस्रार चक्र में परम शिव से सामरस्य प्राप्त करती है। मत्स्येन्द्र के योगिनी कौल मत में उपुर्यक्त अकुल-कुल-सामरस्य का आभास स्पष्ट रूप से मिलता है। कुल का अर्थ शक्ति है, अकुल शिव का वाचक है। कुल से अकुल की सम्बन्ध-स्थापना ही कौल मार्ग है। दोनों का सामरस्य ही कौलज्ञान है। शिव नाम-गोत्र से परे होने के नाते अकुल हैं, शिव की सिसृक्षा-सृष्टि करने की इच्छा ही शक्ति है। शिव और शक्ति चन्द्रमा और चन्द्रिका की भाँति अभिन्न हैं। कहा जाता है कि जिस प्रकार वृक्ष के बिना छाया नहीं रह सकती, अग्नि के बिना धूम अस्तित्वहीन है, उसी प्रकार शिव और शक्ति अविच्छेद्य हैं। महामति मत्स्येन्द्रनाथ की विज्ञप्ति है :

न शिवेन बिना शक्तिर्न शक्तिरहितः शिवः।
अन्योन्यं च प्रवर्तन्ते अग्निधूमौ यथा प्रिये।
न वृक्षरहिता छाया नच्छायारहितो द्रुमः॥

(कौलज्ञाननिर्णय १७/८-९)

'कौलज्ञाननिर्णय' में योगेश्वर मत्स्येन्द्रनाथ की उक्ति है कि वस्तुतः जगत् जीव से ही सृष्ट है। जीव ही समस्त तत्वों का नायक है, यही हंस है, यही शिव है, यह व्यापक परमशिव है। वही मन भी है और वही जगत् में व्याप्त है। शिवस्वरूप जीव ही अपने आपको मुक्ति और भुक्ति प्रदान करता है। आत्मा ही परम गुरु है, प्रभु है और मुक्तिदाता है। जिसने यह आत्मतत्व समझ लिया है, वही योगिराट् है। वह साक्षात् शिवस्वरूप है और दूसरे को मुक्त करने में समर्थ है।

जीवेन च जगत् सृष्टं स जीवस्तत्त्वनायकः।

स जीवःपुद्गलो हंस स शिवो व्यापकः परः॥
स मनस्तूच्यते भद्रे व्यापकः स चराचरे।
आत्मानमात्मना ज्ञात्वा भुक्तिमुक्तिप्रदायकः॥
प्रथमस्तु गुरुर्ह्यात्मा आत्मनं बन्धयेत् पुनः।
बन्धस्तु मोचयेद्ध्यात्मा आत्मा वै कायरूपिणः॥
आत्मनश्चापरो देवि येन ज्ञातः स योगिराट्।
स शिवः प्रोच्यते साक्षात् स मुक्तो मोचयेत् परः।

(कौलज्ञाननिर्णय १७/३३-३७)

मत्स्येन्द्रनाथ ने कौलमार्ग में अकुल (शिव) और कुल (शक्ति) का समरसीकरण कर नाथ-योग में शिवमयी शक्ति का समावेश किया। गोरखनाथ ने अपने सिद्धसिद्धान्तपद्धति' ग्रन्थ में शक्तियुक्त जगद्गुरु आदिनाथ शिव को नमस्कार कर गुरु मत्स्येन्द्र के योगिनी कौलमत की सिद्धमत में मान्यता समर्थित की है। उनकी उक्ति है :

आदिनाथं नमस्कृत्य शक्तियुक्तं जगद्गुरुम्।
वक्ष्ये गोरक्षनाथोऽहं सिद्धसिद्धान्तपद्धतिम्॥

(सिद्धसिद्धान्तपद्धति १/१)

कौल साधना में सामरस्य का सिद्धान्त है निद्रित कुण्डलिनी को जगाकर शिव में उत्थापित करना। पीठ में स्थित मेरुदण्ड जहाँ सीधे जाकर पायु और उपस्थ के मध्य भाग में लगता है, वहाँ एक स्वयम्भू लिङ्ग है। यह त्रिकोण चक्र में स्थित है, यह अग्नि चक्र है, इस त्रिकोण में स्थित स्वयम्भू लिङ्ग को साढ़े तीन वलयों या वृत्तों में लपेट कर सर्पिणी की भांति कुण्डलिनी अवस्थित है, इसके ऊपर चार दलों का एक कमल है, जो मूलाधार चक्र कहलाता है, इसके ऊपर नाभि के पासस्वाधिष्ठान चक्र है, यह छः दलों के कमल के आकार का है; इसके ऊपर मणिपूर चक्र है, इसके ऊपर हृदय के

पास अनाहत चक्र है, ये दोनों क्रमशः दस और बारह दलों के पद्मों के आकार के हैं। इनके भी ऊपर कण्ठ के पास विशुद्धाख्य चक्र है, यह सोलह दल के पद्म के आकार का है। ऊपर जाकर भ्रूमध्य में आज्ञा चक्र है, इसके दो ही दल हैं। इन षट्चक्रों को पार करती हुई उद्बुद्ध कुण्डली-शक्ति सबसे ऊपर वाले सातवें चक्र (सहस्रार) में परम शिव से मिलती है, इस चक्र में सहस्र दल हैं, इसलिये यह सहस्रार कहलाता है, यह परम शिव का निवास होने के नाते कैलाश कहलाता है। इस तरह सहस्रार में परम शिव, हृदय पद्म में जीवात्मा और मूलाधार में कुण्डलिनी की स्थिति है। जीवात्मा परम शिव से चैतन्य और कुण्डलिनी से शक्ति प्राप्त करता है। कुण्डलिनी जीव-शक्ति है। कौल साधक कुण्डलिनी को जगाकर मेरुदण्ड की मध्यस्थिता नाड़ी सुषुम्ना के मार्ग से सहस्रार में स्थित परम शिव में उत्थापित करता है। शिव का शक्ति से यह सामरस्य ही परमानन्ददायक है। निर्विकार निष्कल शिव को जान लेने पर जीवात्मा सर्वबन्धविनिर्मुक्त हो जाता है। नाथ-मत में श्रीमत्स्येन्द्रनाथ की कृपा से यह षट्चक्रगत कुण्डलिनी उद्बोधन षडंग योग का एक विशिष्ट अंग है। नाथ-योग-साधना में मुक्ति नाथस्वरूप में अवस्थिति है। इससे सदानन्दावस्था की समुपलब्धि होती है। नाथ तत्व मत्स्येन्द्रनाथ के योगज्ञान के प्रकाश में अनादि (शिव) तत्व है, भुवनत्रय की स्थिति का कारण है। नाथयोगी अपने स्वरूप में परमेश्वर शिव को अभिन्न देखता है।

नाथ-सम्प्रदाय में मत्स्येन्द्रनाथ के पथप्रदर्शन में महायोगी गोरखनाथ द्वारा योग-सिद्धान्त का विवेचन महत्वपूर्ण है। मत्स्येन्द्रनाथ का नाम महाप्रकाश भी कहा जाता है। काशमीरी अपभ्रंश में एक 'महार्थमञ्जरी' नाम की रचना है उसके रचयिता गोरखनाथ (महेश्वरानन्द) हैं, उन्होंने उपर्युक्त रचना के प्रारम्भ में अपने गुरु महाप्रकाश का स्मरण किया है। गोरखनाथजी के यह पूछने पर कि अविगत का सुख किस प्रकार

प्राप्त किया जाता है, मत्स्येन्द्र ने बताया कि 'गुरुमुख' से ही इसकी प्राप्ति होती है।

गुरमुख अविगत का सुख लहै।
ऐसा विचार मछिंद कहै।।

(गोरखबानी मछीन्द्र-गोरख-बोध ८६)

गोरखनाथ अपने अविगत आत्मस्वरूप का प्रतिपादन करते हुए मत्स्येन्द्रनाथ को अपना पथ-प्रदर्शक चुनने के सम्बन्ध में विलक्षण बात कहते हैं, जिससे गुरुतत्व पर विशिष्ट प्रकाश पड़ता है। उनका कथन है कि शिव हमारे शिष्य और मत्स्येन्द्र प्रशिष्य हैं, हमें गुरु की आवश्यकता नहीं थी, हम साक्षात् परमात्मा हैं पर इस भय से कि हमारा अनुकरण कर अज्ञानी लोग बिना गुरु के ही योगी बनने का दम न भरें, हमें मत्स्येन्द्रनाथजी को गुरु बनाना पड़ा। यह उलटी स्थापना अथवा क्रम है। यदि हम ऐसा नहीं करते तो गुरुहीन पृथ्वी प्रलय में समा जाती।

अवधू ईश्वर हमारैं चेला भणीजैं मछींद्र बोलिए नाती।
निगुरी पिरथी परलै जाती ताथै हम उल्टी थापना थापी।।

(गोरखबानी सबदी १४४)

इसलिए उन्होंने सद्गुरु की खोज की बात पर जोर दिया है कि अहंकार को तोड़ना चाहिए, सद्गुरु की खोज करनी चाहिए, योगपथ की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। नाथयोग में गुरु की प्राप्ति योगसाधना का प्राण है।

आपा भांजिबा सतगुर खोजिबा जोग पंथ न करिबा हेला।

(गोरखबानी सबदी २०३)

कामरूप महापीठ अथवा कदलीवन में रानी मंगला के रमणीराज्य में प्रवेश कर (तथाकथित) कामोपभोग में आसक्त मत्स्येन्द्रनाथ को गोरखनाथ ने योगज्ञान-सिद्धमतमूलक महाज्ञान का स्मरण दिलाया। 'जाग मछीन्द्र गोरख आया' का प्रसङ्ग नाथ-सम्प्रदाय में ही नहीं, भारत के

प्रायः सभी संतमतों में बहु-चर्चित है। स्वयं गोरखनाथ ने मत्स्येन्द्र से कहा कि हे गुरुदेव आत्मा के ज्ञान का विस्मरण न कीजिये। ऐसा करने से कमनीय काया स्वस्थ और सुरक्षित रहेगी। विद्यानगर से आए हुए कान्हापाव (कृष्ण पाद) से भेंट हुई थी। उन्हीं से आपकी इस दशा का पता लगा कि आप कामिनियों के जाल में पड़े हुए हैं। आपका यह पतन भ्रम के कारण हुआ है। आपने अमृत रस को बाघनी (माया) की गोद में खो दिया है। माया के घुँघरू के बजने से स्वर के साथ तालयुक्त नृत्यमग्न माया के व्यामोह से आपने आध्यात्मिक पूँजी खो दी है।

छाँटै तजौ गुरु छाँटै तजौ तजौ लोभ मोह माया।
आत्मा परचै राखी गुरुदेव सुन्दर काया॥
कान्हीं पाव भेटीला गुरू, विद्यानग्र सैं।
ताथै मैं पाइला गुरू, तुम्हारा उपदेसैं॥
एतैं कछू कथीला गुरु, सबै भैला भोलै।
सब रस खोइला गुरु बाघनी चैं खोलै॥
नाचत गोरखनाथ घूँघरीं, चे घातैं।
सबैं कमाई खोई गुरु बाघनी चै राचैं॥

(गोरखबानी पद २)

'मछीन्द्रगोरखबोध' में महायोगी गोरखनाथ की अनेक यौगिक समस्याओं के समाधान में मत्स्येन्द्र ने योगज्ञान का महत्वपूर्ण विवेचन किया है। मत्स्येन्द्र ने कहा कि योगी को हाट-बाट में और वृक्ष आदि के तले अल्प समय तक रह कर भ्रमण करते रहना चाहिए, एक ही स्थान पर घर बनाकर नहीं रहना चाहिए। काम, क्रोध, तृष्णा और सांसारिक माया का परित्याग कर देना चाहिए, आत्मज्ञान में स्थित रहकर अनन्त (परमात्म) तत्व का चिन्तन करना चाहिए। थोड़ा सोना और सूक्ष्म आहार ग्रहण करना चाहिये। मत्स्येन्द्रनाथ ने कहा :

अवधू रहिबा हाटै बाटै रूख वृष को छाया।
तजिबा काम क्रोध, तृष्णा संसार की माया।।
आप सौं गोष्टी अनन्त बिचार। खंडित निद्रा सुछिम अहार।।

(मछीन्द्रगोरख बोध २)

उन्होंने गोरखनाथ को परमतत्व का ज्ञान समझाया कि साधक की सहज शून्य में उत्पत्ति होती है, वह सम शून्य में सद्गुरु–परम तत्व का ज्ञान प्राप्त करता है और अतीत शून्य में समाहित रहता है।

अवधू सहज सुंनि उतपनां आइ। समि सुंनि सतगुरू बुझाइ।
अतीत सुंनि मैं रह्या समाइ। परम तत्व मैं कहूँ समझाइ।।

(मछीन्द्रगोरख बोध ६२)

मत्स्येन्द्र ने बताया कि मूलाधार में स्थित कुण्डलिनी की जागृति, सुषुम्ना में स्थित पवन तथा हृत्कमल में स्थित जीव और सहस्रार में विराजमान शिव का ही सदा साधक को चिन्तन करते रहना चाहिए, यही महाज्ञान–प्राप्ति का सहज मार्ग है :

अवधू अरधै बसै सक्ती उरधै बसै जीव।
भीतरि बसैं पवना अंतरी बसै जीव।।
निरंतर इनका परचा लहै। ऐसा विचार मछीन्द्र कहै।

(मछीन्द्रगोरख बोध ८०)

मत्स्येन्द्र की योगपरम्परा अक्षुण्ण है। गोरखनाथ, चौरंगीनाथ, निवृत्तिनाथ, संत ज्ञानेश्वर (ज्ञाननाथ), सिद्ध योगी गम्भीरनाथ आदि ने उनके यौगिक महाज्ञान से असंख्य जीवात्माओं को आत्मामृत प्रदान किया। चौरंगीनाथ की अपनी रचना 'प्राणसंकली' में स्वीकृति है :

ग्यानरा गुर अम्हारा सिध मछीन्द्रनाथ, ताप्रसादै भइला पग हाथ।
त्रिभवने किरत थाकली अम्हारी अनदाता श्रीगोरखनाथ।।

(प्राणसंकली १२)

'प्राणसंकली' में मत्स्येन्द्रनाथ के चरणकमल में चौरंगीनाथ ने

महती श्रद्धा प्रकट कर उनकी महत्ता का दर्शन कराया है:

'सनमुख देखीला श्रीमच्छन्द्रनाथ गुरुदेव नमसकार करीला नमाइला माथा। आसीरबाद पाइला अम्हे मने भइला हरषित होठ कण्ठ तालुका रे सुकाइला धर्मना रूप मच्छन्द्रनाथ स्वामी।'

(प्राणसंकली)

गोरखनाथ ने अपनी 'रोमावली' रचना में समन्वयवादी दृष्टिकोण से कहा है कि घट में भीतर चार पीर (देव) हैं, मन मत्स्येन्द्रनाथ, पवन ईश्वरनाथ, चेतना चौरंगीनाथ और ज्ञान गोरखनाथ है।

चारी पीर बोलिजै घट भीतरि। ते कोंण कोंण।
मन मछिंद्रनाथ पवन ईश्वरनाथ, चेतना चौरंगीनाथ ग्यान गोरखनाथ॥

(रोमावली)

मत्स्येन्द्रनाथ का योगदान अध्यात्म-सागर का प्रकाश स्तम्भ है। मत्स्येन्द्र की रचनाओं में 'कौलज्ञान निर्णय' एक श्रेष्ठ कृति है। उन्होंने अनेक ग्रन्थ लिखे, जिनमें अकुल वीरतन्त्र, कुलानन्द और ज्ञानकारिका विशिष्ट हैं।

मत्स्येन्द्रनाथ ने योगियों के सर्वश्रेष्ठ मत-सिद्धमत के प्रवर्तक के रूप में जगत् के असंख्य प्राणियों को गुरुज्ञान योगबोध अथवा महाज्ञानका उपदेशकर उन्हें मुक्ति प्रदान की, संसार-सागर से पार उतरने के लिए योगामृतज्ञान की नौका दी। यदि वे महाकारुणिक योगेश्वर परम गुरु परमात्म योग का विधान न प्रस्तुत करते तो असंख्य जीव योगाभ्यास में तत्पर होकर किस तरह आत्मकल्याण करते। श्रीमत्स्येन्द्रनाथ योगदर्शन के महनीय आचार्य थे, वे अमर हैं।

गुरु श्री गोरखनाथ की परम्परा और विरासत

□ डॉ० आद्याप्रसाद द्विवेदी*

नाथ पंथ भारतीय इतिहास की वह प्रबलधारा है जो शताब्दियों तक भारत देश के, अधिकांश भाग में प्रवाहित होती रही, जिसने विविध साधना पद्धतियों और साहित्य की धाराओं को प्रभावित किया है। इसी नाथ पंथ में ईसा की नवी-दसवीं शताब्दी के मध्य में महानयोगी गुरु गोरखनाथ का प्रादुर्भाव हुआ। योगिराज गोरखनाथ को नाथ पंथ के प्रवर्तक के रूप में स्वीकार किया गया है। नाथ सम्प्रदाय में इन्हें भगवान शिव के अवतार के रूप में मान्यता मिली हुई है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार 'शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और महिमा मण्डित व्यक्तित्व भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। भारत वर्ष के कोने-कोने में इनके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं। भक्ति आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली आन्दोलन गोरखनाथ का भक्तिमार्ग ही था। गुरु गोरखनाथ अपने युग को सबसे बड़े धार्मिक नेता थे।'

गोरखनाथ कौन थे, कहाँ एवं किस जाति में जन्मे; यह कोई महत्त्वपूर्ण विचारणीय विषय नहीं है। वे एक ऐसे महान युगद्रष्टा-युगप्रवर्तक महापुरुष थे जिनकी सिद्धियों की चर्चा सम्पूर्ण भारतवर्ष में तो है ही भारत के बाहर अन्यान्य देशों जैसे नेपाल, तिब्बत, पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान तथा सुदूर दक्षिण पूर्व एशिया के कम्बोडिया, लाओख आदि कई देशों तक फैली हुई है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में शंकराचार्य के बाद दूसरा कोई अन्य लोक प्रसिद्ध महापुरुष नहीं हुआ लेकिन मुझे लगता है कि भगवान बुद्ध के पश्चात् गोरखनाथ

* पूर्व संकायाध्यक्ष, कलासंकाय, वीरबहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, उत्तर-प्रदेश।

ही लोकनायक की प्रतिष्ठा प्राप्तकर सके। गोरखनाथ भी भगवान बुद्ध की भाँति समाज के उपेक्षित दलित वर्ग के साथ-साथ शासक और शासित, संपन्न और विपन्न या यों कहा जाय कि सर्वसमाज के नेता और पथ प्रदर्शक थे। किसी समय नेपाल, राजस्थान, गुजरात के राजवंशों से लेकर अछूत और अन्त्यज कहे जाने वाले वर्ग की झोपड़ियों तक गोरखनाथ के प्रभाव का डंका बजता था। गोरखनाथ के प्रभाव और सिद्धियों की चर्चा सम्पूर्ण भारतवर्ष और कुछ अंश तक भारत देश की सीमा के बाहर भी किस्से-कहानियों के रूप में इतनी प्रचलित है और इतनी आश्चर्यजनक है कि लगता है कि गोरख़नाथ कोई हाड़-मांस के व्यक्ति नहीं एक अलौकिक शक्ति सम्पन्न पौराणिक या मिथकिय महापुरुष थे। जार्ज वेस्टन ब्रिग्स ने अपनी पुस्तक-गोरखनाथ एण्ड दि कनफटा योगीज' में बहुत विस्तारपूर्वक उनके संबंध में प्रचलित हर दंतकथा और लोकोक्तियों का उल्लेख करते हुये उनके व्यापक प्रभाव का उल्लेख किया है। इन्ही लोकोक्तियों या कहावतों में एक कहावत लोक में बहुत प्रचलित है-गोरखधंधा में पड़ना। गोरखपंथी साधुलोहे या लकड़ी की सलाइयों को हेर-फेर करके एक चक्र बनाते हुये उनके बीच में एक छेद बनाते हैं। इसी छेद में कौड़ी या माना का धागा डालकर मंत्र पढ़कर उसे निकाला करते हैं। यहीं क्रिया गोरखधंधा या धंधारी कहा जाता है। योगियों के वेष में इसका उल्लेख पद्मावत और उसमान कृत चित्रावली में कई बार हुआ है, गोरखधंधा या धंधारी की क्रिया जाने बिना छेद में से धागा या कौड़ी को निकालना बहुत ही उलझन भरा काम है। इसीलिये लोक में गोरखधंधा उलझन भरे कार्य का एक वाचक बन गया है। इस सन्दर्भ में रांगेय राघव लिखते हैं कि श्री गोरखनाथ का व्यक्तित्व इतना बहुआयामी था, विविधापूर्ण था कि एक साथ विविध कार्यों में फँसे सामान्य मानव के लिए इसे गोरखधन्धा की

उपाधि दी जाने लगी।

गोरानाथ के नाम से लगभग तीस संस्कृत पुस्तकें प्राप्त होती हैं। पुरानी हिन्दी में गोरखनाथ की छोटी-बड़ी मिलाकर चालिस रचनाओं की चर्चा की जाती है। डॉ0 पीताम्बरदत्त बड़थ्यवाल ने 'गोरखबानी' नाम देकर इन रचनाओं को संपादित किया है। इन रचनाओं में सहज जीवन, ब्रह्मचर्य, संयत आचरण और सहज शील का उपदेश है। हिन्दी के अतिरिक्त बंगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में भी महायोगी गोरखनाथ की उक्तियां प्राप्त होती हैं। लोक भाषाओं में जैसे भोजपुरी, अवधी, मराठी में रचित इनकी उक्तियों का तात्पर्य लगभग एक जैसा ही है। इन सभी रचनाओं में नाथ योग के सिद्धान्त एवं साधनापक्ष का विवेचन किया गया है।

गोरखनाथ ने एक नयी योग प्रणाली को जन्म दिया जिसे हठयोग कहते हैं। शरीर और उसकी नाड़ियों की शुद्धि और स्वास्थ्य की रक्षा करना हठयोग का मुख्य उद्देश्य है। गोरखनाथ ने अपने नैतिक वचनामृतों को लोकभाषाओं में दिया है। उन्होंने योगियों के लिये मन की शुद्धता तथा दृढ़ता को जरूरी बताया। उन्होंने केवल योगियों के लिये ही नहीं वरन, सामान्य मनुष्यों के लिये भी चित्त की दृढ़ता जरूरी बताया। गोरखनाथ की साधना, चिन्तन और भावना ने जन-जन को प्रभावित किया। इस प्रभाव का ही परिणाम था कि भारतवर्ष को एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक उनके कृत्यों की अनेक जनश्रुतियाँ फैली, लोकवार्ताओं के मिथक पुरुष बने, अनेक अद्‌भुत चमत्कारों की चर्चा लोगों की प्रेरणा का कारण बनीं।

गुरु गोरखनाथ में सांगठनिक क्षमता भी अद्‌भुत थी। उन्होंने अपनी इस क्षमता का भरपूर उपयोग अपने सम्प्रदाय को संगठित करने में किया। भारतीय इतिहास के इस मध्य युग को अंधकार काल कहा जाता

है। इस अज्ञानकाल में भारतीय धर्मसाधना को पुनः एक बार विशुद्ध रूप से सर्वव्यापक और प्रभावशाली बनाने का श्रेय किसी को देना हो तो वह महान सुधारक और प्रचारक गुरु गोरखनाथ को ही दिया जाना चाहिये। नाथ सम्प्रदाय का जो वर्तमान रूप है उसके प्रवर्तक और युग निर्माता गोरखनाथ ही है। महायोगी गोरखनाथ के विराट व्यक्तित्व के कारण ही अनेक भारतीय तथा अभारतीय सम्प्रदाय नाथ पंथ में अर्न्तमुख हो गये। महायोगी गोरखनाथ ने योगशास्त्र के सैद्धांतिक पक्ष को व्यवहारिक रूप प्रदान कर जनसामान्य तक पहुँचाया। समग्र भारत ही नहीं अपितु सीमावर्ती देशों को अपनी योग विभूति से तथा चरित्र-चिन्तन एवं व्यवहार से बड़ी गहराई तक प्रभावित करने वाले अग्रगण्य गुरु गोरखनाथ ही हैं 'धन जीवन की करे न आस, चित्त न राखे कामिनी पास' जैसे कथनी से स्पष्ट होता है कि कंचन और कामिनी के प्रति निर्लोभ उनके व्यक्तित्व का प्रमुख अंश है।

भक्ति आन्दोलन से पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन महायोगी गोरखनाथ का योगमार्ग ही था। भारतवर्ष की अधिकांश भाषाओं में गोरखनाथ से संबंधित साहित्य मिल जाता है। इसीलिये तुलसी दास जी को कहना पड़ा-गोरख जगायो योग, भगति भगायो लोग. एक प्रकार से कहा जा सकता है कि गुरु गोरखनाथ और नाथ पंथ की योग साधना एवं क्रिया-कलापों की प्रतिक्रिया ही सभी निर्गुण एवं सगुणमार्गी संतों के साहित्य में लक्षित होती है। गोरखनाथ जी ने झोपड़ी से लेकर महल, रंक से राजा सभी को अपनी योगसाधना और तपस्या से प्रभावित किया। जायसी का पद्मावत, कुतबन की मृगावती, उसमान की चित्रावली आदि ग्रंथों में गोरखनाथ का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ता है। कबीरदास जी ने अपने पदों तथा अन्य साखी-सबद आदि में अनेक बार गोरखनाथ जी और उनके योग का बखान किया है।

कबीर साहब के अलावा नानक, दादू, मलूक, दरिया साहब, असम के माधव कन्दली, उड़िया के बलरामदास, बंगाल के कृतिवास की रचनाओं से गोरखपंथ का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। गुरु गोरखनाथ का उल्लेख सर्वप्रथम महाराष्ट्र के संत ज्ञानेश्वर ने अपने ग्रंथ 'अमृतानुभव' में किया है जिनका समय बारहवीं सदी का उत्तरार्द्ध है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि समस्त उत्तर और पश्चिमोत्तर भारतवर्ष में गोरखनाथ और उनकी योगसाधना ने तेरहवीं सदी से लेकर आज तक समूचे भक्ति आन्दोलन के आध्यात्मिक चिंतन को प्रभावित किया है।

गोरखनाथ जी का सामाजिक प्रदेय

गोरखनाथ के अपने समय की सामाजिक परिस्थितियों में प्रचलित असद् प्रवृत्तियों, विसंगतियों, विचलित व्यवहारों, संगठनात्मक असंतुलन अव्यवस्था, असामंजस्य की विभिन्न दशाओं में जो क्रांतिकारी परिवर्तन किया वह इस प्रकार है:

१. वर्णजाति का विरोध-गोरखनाथ ने सामाजिक कलंक, अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिये समाज के सभी वर्गों, जातियों के लिये अपना द्वार खोल दिया। सामाजिक उत्क्रांति का यह प्रथम प्रयास भारतीय इतिहास में गुरु गोरखनाथ ने भगवान बुद्ध के पश्चात किया।

२. पाखंडों का खंडन-सदाचार का मंडन-समाज में पंडो, पुरोहितों तथा पुजारियों द्वारा स्वर्ग और नरक का जो चित्र प्रस्तुत कर शोषण किया जा रहा था उसका खंडन करते हुये अपने सिद्ध-सिद्धान्तों में कहा है-(क) पुजाहार विहार युक्त संयमित जीवन ही शरीर का सुख है-यही स्वर्ग है। असंयमित तथा आहार-विहार व्यतिक्रम जन्य रोगाक्रांत अवस्था ही दुःख है यही नरक है।

सामाजिक सुधार के लिये संगठन-गोरखनाथ जी तत्कालीन समाज में फैले हुये वाममार्गी पंचमकारों से संघर्ष करते हुये अपने

हठयोग प्रधान नाथ सम्प्रदाय का संगठन मजबूत किया। उन्होंने अनेक शैव और योग सम्प्रदायों को तोड़कर बारह पंथी शाखा की स्थापना की जिनके नाम सत्यनाथी, धर्मनाथी, वैराग्य पंथ, गंगावादी आदि गोरखनाथ के शिष्यों तथा प्रशिक्षणों द्वारा स्थापित किये गये भारत-नेपाल तथा सीमावर्ती अन्य प्रदेशों में स्थापित मंदिर-मठ आज भी अपनी कीर्ति फैलाये हुये हैं।

गोरखनाथ जी सामाजिक समरसता के प्रचंड पुरोधा थे। उनके समय का भारतीय समाज बौद्ध-जैन, अद्वैत, पुराण, कर्मकाण्ड, स्मृति-तंत्र, शैव, वैष्णव, निर्गुण-सगुण आदि प्रपंचों से ऊब गया था। इनसे ऊबे हुये लोगों ने गुरु गोरखनाथ की शरण ली।

गोरखनाथ जी का लक्ष्य था कि समाज निडर, समरस और सुखी बने, आत्मतत्व का बोध एवं नाथ पंथी योगी साधना द्वारा सात्विक जीवन का आदर्श बने। भारतीय अध्यात्म चिंतन को यही गोरखनाथ जी की बड़ी देन है। गोरखनाथ जी ने गुमराह जनता को एक दिशा दी। जगत को नांद और बिन्दु से उत्पन्न बताया। कर्मकाण्ड, मूर्तिपूजा, शास्त्र यज्ञ, उपासना, व्रत सबको व्यर्थ बताया। सहजजीवन को श्रेयस्कर बताया। गोरखनाथ जी ने मनुष्य के सर्वांगीण विकास का मार्ग खोज दिया। उनके जीवन को देखने से प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने समकालीन सामाजिक जीवन में व्याप्त दुषित मान्यताओं को खंडित करके अपने सुधारात्मक प्रक्रियाओं द्वारा जिस सम्प्रदाय को स्थापित किया वह भगवान् बुद्ध के पश्चात् भारतीय इतिहास में एक अद्भुत कदम है। महायोगी गुरु गोरखनाथ तथा उनके द्वारा स्थापित किये गये अन्य नाथपंथी संतों की यह साधना आज भी मनुष्यको सांस्कृतिक, मानसिक, शारीरिक और सामाजिक रूप से समुन्नत, संस्कारित और स्वस्थ बनाने में निरंतर क्रियाशील है।

सिद्धि-मार्ग

□ अजय कुमार शुक्ल*

योगी और दार्शनिक दोनों का चरम लक्ष्य उस सर्वव्यापी परमसत्ता को ढूँढ़ना है जो सबसे परे ब्रह्माण्ड का मूलाधार, मानव-अनुभव एवं समस्याओं का अन्तिम समाधान है। यद्यपि योगी और दार्शनिक दोनों का अन्तिम लक्ष्य एक ही है किन्तु उनके इस लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग भिन्न-भिन्न हैं। दार्शनिक का मार्ग बौद्धिक है जबकि योगी का मार्ग आध्यात्मिक है। दार्शनिक विचारपूर्ण तर्क और चिन्तन के मार्ग पर अग्रसर होता है जबकि योगी नैतिक और मानसिक अनुशासन के मार्ग पर अग्रसर होता है। दार्शनिक तर्कातीत पूर्ण सत्य की तार्किक धारणा प्रस्तुत करना चाहता है। अपनी बौद्धिक संतुष्टि के लिए आध्यात्मिक पारमार्थिक सत्यान्वेषण के क्रम में एक दार्शनिक का प्रयास मुख्यत: परीक्षणपरक होता है। योगी अपनी आत्मा की मौलिक आवश्यकता की पूर्ति का सर्वथा ध्यान रखता है। एक दार्शनिक के व्यावहारिक जीवन और बौद्धिक धारणा में सामंजस्य न होने पर भी वह दार्शनिक बना रहता है लेकिन एक योगी तब तक योगी नहीं माना जा सकता जब तक उसका आचरण उसकी सैद्धान्तिक मान्यताओं के अनुरूप जीवन के सभी क्षेत्रों में पूर्णत: अनुशासित न हो जाय।

योग मार्ग में ऐसे किसी बौद्धिक विकल्प की आवश्यकता नहीं होती है। इसमें न तो प्रकल्पना के निर्माण की जरूरत होती है और न तो उनकी तार्किक समीक्षा की, वह तो चेतना को उच्च आध्यात्मिक स्तर पर उठाकर परम सत्य की प्रत्यक्ष अनुभूति करना चाहता है। इस प्रकार के अनुभव की यथार्थता में अटूट विश्वास रखकर योगी अपने मार्ग पर अग्रसर होता है।

---

* आचार्य, राम गुलाम राय पी.जी. कॉलेज, बनकटाशिव, सल्लहपुर, भटनी, देवरिया।

परम सत्य की खोज योगी इस विश्वास के साथ करता है कि यद्यपि परम सत्य बौद्धिक धारणा या तार्किक विश्लेषण से परे है किन्तु वह स्वयं को मानवीय चेतना के समक्ष प्रकट कर देता है। इसीलिए योगी परम सत्य के बारे में निरर्थक तार्किक युक्तियों और धारणाओं के निर्माण के स्थान पर अपनी चेतना को, यम-नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के आत्म अनुशासन मार्ग का अनुसरण कर उच्च स्तरीय बनाने का प्रयास करता है और यह प्रयास तब तक चलता रहता है जब तक अद्वैत सिद्धि प्राप्त नहीं हो जाती।

नाथ योग मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, दर्शन, धर्म एवं साधना के क्षेत्र में सर्वाधिक लोकप्रिय तथा जनमानस को प्रभावित करने वाला तत्त्व रहा है। इसका प्रधान कारण यह था कि इसमें एक साथ सैद्धान्तिक स्तर पर तत्त्व चिन्तन एवं व्यावहारिक स्तर पर चिन्त्य-तत्त्व को ग्रहण करने योग्य मनोभूमि के निर्माण के लिए शारीरिक साधना की व्यवस्था रही है। गोरक्षनाथ की हठयोग साधना प्रणाली एक ऐसी पुरानी परम्परा का ही किंचित नया रूप है जो कदाचित् द्वितीय शती में भी प्रचलित थी। सामान्यतः हठयोग का अर्थ है-'हठेन बलात्कारेण योग सिद्धि' अर्थात् बलपूर्वक योगसाधना से सिद्धि-लाभ करना। वास्तव में वैषम्य से ही जगत् की उत्पत्ति होती है, समता प्रलयसूचक है। शिव-शक्ति, पुरुष-प्रकृति आदि शब्द इसी द्वन्द्व के बोधक हैं। जीव देह में प्राण और अपान का संघर्षण ही जीवन है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा है-'संयोगो योग इत्युक्तः जीवात्म परमात्मनो' अर्थात् जीवात्मा और परमात्मा का संयोग ही योग है। 'स्कन्द पुराण' में आत्मा और मन के संयोग को योग कहा गया है। 'योगबीज' में अपान और प्राण, रजस और तेजस, सूर्य और चन्द्रमा तथा जीवात्मा और परमात्मा के संयोग को 'योग' कहा गया है। 'ह' और 'ठ' क्रमशः सूर्य-चन्द्र, इड़ा-पिंगला, प्राण-अपान एवं बिन्दु-रज के भी द्योतक हैं।

गोरक्षनाथ ने अपने षडांग योग के अन्तर्गत यम और नियम की

गणना न कर उन्हें मानव मात्र के लिए अनुष्ठेय माना है। फिर भी हठयोग प्रदीपिका में दस यम और दस नियमों की चर्चा की गयी है। पथ्यापथ्य का विशेष ध्यान दिया गया है। योग-साधना में गुरु महत्ता अपरिहार्य है। नाथों की योग साधना का आरम्भ गुरु तत्त्व से होता है। गुरु को ३६ लक्षणों से युक्त माना गया है। शिष्य में ३२ लक्षण ही होते हैं। साधक के इस ३२ गुणों की परीक्षा का उल्लेख गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह तथा नाथपंथीय हिन्दी रचनाओं में प्राप्त होता है। साथ ही साथ गुरु की सुयोग्यता पर भी ध्यान दिया गया है। आत्म ज्ञान से वंचित करने वाला, ज्ञानहीन गुरु सर्वथा त्याज्य है। यम-नियम के सम्यक् अभ्यास के बाद हठयोग का वास्तविक आरम्भ होता है। वैराग्य की भावना जब हृदय में दृढ़ता से उत्पन्न हो जाती है तो वह अपनी अभिव्यञ्जना में तीन मार्ग-इन्द्रिय निग्रह, प्राण साधना और मन साधना का आश्रय लेती है। यद्यपि हठयोग का मूल तत्त्व प्राणायाम है पर इसकी सिद्धि के लिए आसन धैर्य की महती आवश्कता है।

आसन शब्द उपवेशनार्थक आसन् धातु से बना है। जिस विधि से बैठा जाय उसी का नाम आसन है। 'आस्यते अनेन इति आसनम्'। पतञ्जलि ने इसका स्पष्टीकरण 'स्थिर सुखमासनम्' कहकर किया है। हठयोग के ग्रंथों में आसनों की संख्या ४८००० बतायी गयी है जिसमें से ४४ आसनों की विशेष उपयोगिता सिद्ध की गयी है। पर योग साधना की दृष्टि से जिन चार आसनों की सार्थकता बतायी गयी है वे हैं-सिद्धासन, पद्मासन, सिंहासन और भद्रासन। हठयोग प्रदीपिका में सिद्धासन को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है तथा इसे ही वज्रासन, मुक्तासन तथा गुह्यासन के नाम से अभिहित किया गया है। धर्म साधन के लिए शरीर को स्वस्थ रखना आवश्यक है। आसनों के अभ्यास से शरीर में आरोग्यता, स्थिरता एवं गुरुता का नाश तथा द्वन्द्वों पर विजय प्राप्त होने से यथासुख तथा स्थित रूप अंग लाघव की प्राप्ति

होती है। गोरक्षनाथ ने बड़ी दृढ़तापूर्वक कहा है-

आसन दिढ़ अहार दिढ़ जेन्यंद्रा दिढ़ होई।
गोरख कहैं सणौ रे अवधू मरै न बूढ़ा होइ।।

(गो.वा.सबदी पृ.१२५)

सुयोग्य शिक्षक की देखरेख में संतुलित आहार एवं नैतिकता के साथ आसनों का नियमित अभ्यास साधक को इस योग्य बना देता है कि वह प्राणायाम मुद्रा और अन्य यौगिक विधियों को करने की क्षमता प्राप्त कर सके। सिद्ध, पद्म, वज्र एवं स्वस्तिक आदि आसनों में से किसी एक ही आसन पर बिना कष्ट के ३ घंटे ३६ मिनट तक बैठने से आसन सिद्धि मानी जाती है।[१]

षडांग योग का दूसरा महत्त्वपूर्ण अंग प्राणायाम, नाड़ियों से सम्बद्ध है। शरीर में ७२ हजार नाड़ियाँ हैं। इनकी उद्गमस्थली पिण्ड में मेढ्र से ऊपर नाभि के नीचे स्थित पक्षी के आकार की कन्द योनि बतायी गयी है।[२] योग साधना की दृष्टि से इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना नाड़ियों की विशेष महत्ता है। प्राणायाम के तीन प्रकार हैं-पूरक, कुंभक, रेचक। श्वास को अन्दर की ओर खींचना पूरक है, श्वास को कुछ समय तक अन्दर रोकना कुंभक है। श्वास को धीरे-धीरे बाहर की ओर छोड़ना रेचक है।

आसन और प्राणायाम के पश्चात मुद्रा की साधना की जाती है। जीवात्मा और परमात्मा की एकता की जो उत्पत्ति है उसे 'मुद्रा' कहा गया है।[३] हठयोग की पुस्तकों में मुख्यतः दस उच्चतर मुद्रा विधियों की चर्चा की गयी है-महा मुद्रा, महाबन्ध, महाबेध, खेचरी, उड्डीयान, मूलबंध, नलिधर बंध, विपरीतीकरण, वज्रोली एवं शक्ति चालन। इनमें से किसी एक की सफलता आश्चर्यात्मक अनुभूतियों का साक्षात्कार कराने में समर्थ है। 'हठयोग प्रदीपिका', 'शिव संहिता' एवं धेरेण्ड

संहिता' के अनुसार मुद्राओं के अभ्यास से सभी नाड़ियों में प्राण का सहज गति से प्रवेश, वीर्य की स्थिरता, कशायों और पातकों का नाश, सर्वरोगों का उपशमन, जठराग्नि की वृद्धि, शरीर की निर्मलकान्ति, जरा का नाश, पंचतत्त्वों पर विजय एवं नाना प्रकार की योग सिद्धियों की प्राप्ति बतायी गयी है। परन्तु इनका मुख्य कार्य है कुण्डलिनी शक्ति का उद्बोधन है।[४]

प्रत्याहार के सम्बन्ध में गोरक्ष संहिता में कहा गया है कि चन्द्र की अमृतमयी धारा को सूर्यग्रस्त करता है। उसे सूर्य से हटाकर स्वयं ग्रसना ही प्रत्याहार है। 'सिद्धि-सिद्धान्त पद्धति' एवं 'गोरक्ष पद्धति' में कहा गया है कि इन्द्रियों को विषयों से हटाकर अलग करना ही प्रत्याहार है। प्रत्याहार की साधना से मानसिक विकार नष्ट होते हैं। इसकी साधना के लिए सतत प्रयत्न के साथ धारणा का भी अभ्यास वांछनीय है। धारणा एक निश्चित वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने की निश्चित प्रक्रिया है। हृदय में मन एवं प्राणवायु निश्चल करके पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवं आकाश इन पंच महाभूतों को पृथक्-पृथक् धारणा करना 'धारणा' कहलाती है। धारणा के उपरान्त ध्यान की गणना की गयी है जिसका भाव परम अद्वैत है। धेरेण्ड संहिता में ध्यान के दो भेदों का निर्देश किया गया है-स्थूल एवं सूक्ष्म। गोरक्ष पद्धति में कहा गया है कि एकान्त एवं पवित्र स्थान में बैठकर पद्मासन या स्वस्तिकासन लगाकर शरीर को सरल बनाकर आधारादि चक्रों में मन लगाकर नासाग्र में दृष्टि देकर कुण्डलिनी सहित ध्येय वस्तु का ध्यान करने से योगी समस्त पापों से मुक्त हो जाता है। साधक ज्यों-ज्यों शुद्ध, दृढ़, असम्पृक्त और पूर्वाग्रहरहित मन के साथ गहनतर ध्यान में मग्न होता जाता है, वह मानव चेतना के अन्तर्तम प्रदेशों में छिपे हुए आध्यात्मिक रहस्यों को प्रत्यक्ष अन्तर्ज्ञान से अनुभूत कर लेता है। उसका

मन और प्राण-शक्ति एकनिष्ठ एवं अन्तरोन्मुख होने के कारण क्रमशः उत्तरोत्तर परमात्म तत्त्व से अभिभूत और ज्योतिमण्डित हो जाती है। इस निकास की स्थिति में उसकी व्यक्तिगत चेतना पूर्ण प्रकाशित ऊर्ध्वचेतन स्थिति तक उठ जाती है जिसमें वैयक्तिकता की सीमाएँ अतिक्रमित हो जाती हैं। जहाँ विश्व का, अहम् और इदम् का, आत्म और मन का विरोध शमित हो जाता है। यह स्थिति 'समाधि' की स्थिति कहलाती है जो गहन ध्यानावस्था की पूर्णता है।[५]

मन के द्वारा ध्येय का ध्यान करते-करते उसका ध्येयाकार हो जाना ही समाधि की पूर्णावस्था है। पतञ्जलि ने इसी अवस्था की ओर संकेत किया है : **तदेवार्थ मात्र निर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।**

समाधि प्रक्रिया का उल्लेख करते हुए गोरक्ष पद्धति में कहा गया है कि योगीसाधक सिद्धासन लगाकर दोनों हाथ के अँगूठों से दोनों कर्णछिद्र, तर्जनियों से नेत्र, मध्यमाओं से नासिका और अनामिका तथा कनिष्ठा से मुख बंद कर अधिमुख द्वार से पूरित करके मूलाधार में रहने वाली अग्नि तथा अपान वायु सहित प्राण वायु को हृदय-कमल में धारण कर ऊर्ध्वस्थ का सहस्रदल कमल में धारण करें। इस प्रकार समाधि का अभ्यास करने वाला योगी अपानवायु सम्मिलित प्राणवायु होकर सर्वद्रष्टा साक्षीभूत अंतरात्मा के तुल्य हो जाता है।[७] समाधिस्थ योगी के चारों तरफ ब्रह्म ही अवस्थित रहता है। धीरेन्द्र ब्रह्मचारी का मत है कि कुण्डलिनी शक्ति को जागृत कर सैकड़ों वर्ष तक की समाधि लगायी जा सकती है।

परम विशुद्ध परात्पर चैतन्य, सर्वव्यापी परम सत्ता को प्राप्त करने तथा समाधि सिद्धि में 'गोरक्षनाथ उपदिष्ट सिद्धि-मार्ग' का विशेष महत्त्व है। गुरु गोरक्षनाथ ने जिन सिद्धि-मार्गों का वर्णन किया है उनका विशेषता यह है कि उन मार्गों पर क्रमशः चलता हुआ व्यक्ति समाधि

को तो प्राप्त होता ही है, सर्वव्यापी परम सत्ता की प्राप्ति भी उसे हो जाती है।

उपर्युक्त विवेचनाओं के आधार पर निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि 'गोरक्षनाथ उपदिष्ट सिद्धि-मार्ग' का परम तत्त्व के साक्षात्कार में विशेष महत्त्व है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अष्ट मार्ग है जिनमें से गोरक्षनाथजी ने यम, नियम को छोड़कर शेष छः को ही अपने षडांग योग में स्वीकार किया है तथा यम, नियम की गणना न कर उन्हें मानव मात्र के लिए अनुष्ठेय माना है। फिर भी हठयोग प्रदीपिका में दस यम और दस नियमों की चर्चा की गयी है। गुरु गोरक्षनाथ के षडांग योग और हठयोग प्रदीपिका के अनुसार यही सिद्धि-मार्ग है जिन पर क्रमशः चलता हुआ व्यक्ति सर्वव्यापी, परम विशुद्ध परात्पर चैतन्य परम तत्त्व का साक्षात्कार कर सकता है।

संदर्भ :

१. योग प्रदीपिका-ब्रह्मचारियाज्ञवल्क्येन प्रणीतने, पृ० ५।
२. नाथ और संत साहित्य-तुलनात्मक अध्ययन, डॉ. ना.ना.उपा., पृ० २७८।
३. गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह-सं. भगीरथ प्रसाद त्रिपाठी, पृ० ७।
४. योग वाणी-वर्ष २ फरवरी-१९९७,अंक २, पृ. ३०।
५. नाथयोग : एक परिचय-अक्षय कुमार बनर्जी, पृ० ४७-४८।
६. योग वाणी-वर्ष २, नवम्बर-१९९७, अंक १, पृ. १०।
७. गोरक्ष पद्धति, खेमराज कृष्णदास, पृ० ७०-७१।

दिव्य योगरथ

धर्मोपस्थो ह्रीवरूथ उपायापायकूबरः।
अपानाक्षः प्राणयुगः प्रज्ञायुर्जीवबन्धनः॥
चेतनाबन्धुरश्चारुश्चारग्रहनेभिमान् ।
दर्शनस्पर्शनवहो घ्राणश्रवणवाहनः॥
प्रज्ञानांभिः सर्वतन्त्रप्रतीदो ज्ञानसारथिः।
क्षेत्रज्ञाधिष्ठितो धीरः श्रद्धादमपुरः सरः॥
त्यागसूक्ष्मानुगः क्षेम्यः शौचगो ध्यानगोचरः।
जीवयुक्तो रथा दिव्यो ब्रह्मलोके वराजते॥

यह योग एक सुन्दर रथ है। धर्म ही इसका पिछला भाग या बैठक है। लज्जा आचरण है। पूर्वोक्त उपाय और अपाय कूबर हैं। अपान वायु घुरा है। प्राणवायु जुआ है। बुद्धि आयु है। जीवन बन्धन है। चैतन्य बन्धुर है। सदाचार-ग्रहण इस रथ की नेभि है। नेत्र, त्वचा, घ्राण और श्रवण इसके वाहन है। प्रज्ञा नाभि है। सम्पूर्ण शास्त्र चाबुक हैं। ज्ञान सारथि है। क्षेत्रज्ञ (जीवात्मा) इस पर रथी बन कर बैठा हुआ है। यह रथ धीरे-धीरे चलनेवाला है। श्रद्धा और इन्द्रिय दमन इस रथ क आगे-आगे चलनेवाले रक्षक हैं। त्याग रूपी सूक्ष्म गुण इसके अनुगामी (पृष्ठ रक्षक) हैं। यह मंगलमय रथ ध्यान के पवित्र मार्ग पर चलता है। इस प्रकार यह जीवयुक्त दिव्य रथ ब्रह्मलोक में विराजमान होता है, इसके द्वारा जीवात्मा परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।

(महाभारत शान्ति २३६। ९-१२)

योगी का स्वरूप

आत्मप्रयत्नसापेक्षा विशिष्टा या मनोगतिः।
तस्य ब्रह्मणि संयोगो योग इत्यभिधीयते।।
एवमत्यन्तवैशिष्टययुक्तधर्मोपलक्षणः ।
यस्य योगः स वै योगी मुमुक्षुरभिधीयते।।
योगयुक् प्रथमं योगी युंजानो ह्यभिधीयते।
विनिष्पन्नसमाधिस्तु परं ब्रह्मोपलब्धिमान्।।
यद्यन्तरायदोषेण दूष्यते चास्य मानसम्।
जन्मान्तरैरभ्यसतो मुक्तिः पूर्वस्य जायते।।
विनिष्पन्नसमाधिस्तु मुक्तिं तत्रैव जन्मनि।
प्राप्नोति योगी योगाग्निदग्धकर्मचयोऽचिरात्।।

आत्मज्ञान के प्रयत्नभूत यम, नियम आदि की अपेक्षा रखनेवाली जो मन की विशिष्ट गति है, उसका ब्रह्म के साथ संयोग होना ही योग है। जिसका योग इस प्रकार के विशिष्ट धर्म से युक्त होता है, वह मुमुक्षु योगी कहा जाता है। जब मुमुक्षु पहले-पहल योगाभ्यास आरम्भ करता है, तो उसे योग-युक्त योगी कहते हैं और जब उसे परब्रह्म की प्राप्ति हो जाती है तब वह विनिष्पन्नसमाधि कहलाता है। यदि किसी विघ्नवश उस योगयुक्त योगी का चित्त दूषित हो जाता है तो जन्मान्तर में भी उसी अभ्यास को करते रहने से वह मुक्त हो जाता है। विनिष्पन्नसमाधि योगी तो योगाग्नि से कर्मसमूह के भस्म हो जाने के कारण उसी जन्म में थोड़े समय में मोक्ष प्राप्त कर लेता है। (विष्णुपुराण ६।७।३१-३५)

एन0पी0/जी0आर0-125/14 आर0एन0/29075/76

श्री गोरखनाथ मंदिर के प्रकाशन

क्र.	पुस्तक	लेखक	मूल्य
1	गोरखदर्शन	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	1[illegible]0.00
2	महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति ग्रन्थ	डा भगवती प्रसाद सिंह	80.00
3	नाथ योग	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	10.00
4	आदर्श योगी	रघुनाथ शुक्ल	40.00
5	महायोगी गुरु गोरखनाथ एवं उनकी तपस्थली	राम लाल श्रीवास्तव	15.00
6	गोरखवानी	राम लाल श्रीवास्तव	110.00
7	गोरक्षसिद्धान्तसंग्रह	राम लाल श्रीवास्तव	30.00
8	श्री गोरक्ष वैदिक पूजा पद्धति	वेदाचार्य रामानुज त्रिपाठी	8.00
9	अमनस्क योग	राम लाल श्रीवास्तव	15.00
10	गोरक्ष पद्धति	राम लाल श्रीवास्तव	60.00
11	विवेक मार्तण्ड		7.00
12	महार्थ मंजरी		6.50
13	गोरखचरित्र	राम लाल श्रीवास्तव	30.00
14	हठयोगप्रदीपिका	राम लाल श्रीवास्तव	30.00
15	सिद्धसिद्धान्तपद्धति	राम लाल श्रीवास्तव	25.00
16	योग रहस्य	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	25.00
17	योग बीज	राम लाल श्रीवास्तव	6.00
18	शाबर चिन्तामणि	नित्यनाथ सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ	7.00
19	योगी सम्प्रदाय (नित्कर्म संचय)		90.00
20	गोरखचालिसा		2.00
21	नाथसिद्ध चरितामृत	राम लाल श्रीवास्तव	70.00
22	नाथ पंथ गढ़वाल के परिप्रेक्ष्य में	विष्णुदत्त कुकरेत्ती	30.00
23	अमरकाया महायोगी गोरखनाथ	श्रीमती माया देवी	10.00
24	युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ ने कहा था	महन्त योगी आदित्यनाथ	12.00
25	गोरखनाथ और नाथसिद्ध	डा. अनुज प्रताप सिंह	130.00
26	गोरक्षदर्शन	विजय पाल सिंह	40.00
27	तन प्रकाश	श्री श्री 108 बाबा चुन्नी नाथ जी	20.00
28	हठयोग स्वरुप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
29	यौगिक षट्कर्म	महन्त योगी आदित्यनाथ	21.00
30	नाथ सिद्धो का तात्त्विक विवेचन	अनुज प्रताप सिंह	70.00
31	गोरखमहिमा	महेन्द्र नाथ गोस्वामी	30.00
32	सुभाषित त्रिशती	राम लाल श्रीवास्तव	60.00
33	राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महन्त अवेद्यनाथ (3 खण्ड)	प्रो0 सदानन्द गुप्त	1100.00
34	राजयोग स्वरुप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
35	Philosophy of Gorakhnath	A.K. Banerjee	175.00
36	The Nath-Yogi Sampradaya and The Gorakhnath Temple		3.50
37	An Introduction to Nath-Yoga	A.K. Banerjee	15.00

प्रकाशक :
गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर २७३०१५
web:www.gorakhnathmandir.in
Email:gorakhnathmandir@yahoo.com
दूरभाष : (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४ फैक्स : ०५५१-२२५५४५५